नवजीवन

मोहन-माला

महात्मा गांधीके लेखों और भाषणोंसे वर्षके
प्रतिदिनके मननके लिए चुने हुए सुविचार

मोहन-माला

महात्मा गांधीके लेखों और भाषणोंसे वर्षके
प्रतिदिनके मननके लिए चुने हुए सुविचार

संग्राहक
आर. के. प्रभु

अनुवादक
सोमेश्वर पुरोहित

पहली आवृत्ति, १९६०

मुद्रक और प्रकाशक
विवेक जितेन्द्रभाई देसाई
नवजीवन मुद्रणालय
अहमदाबाद - ३८० ०१४
फोन: +91-79-28540635 | 27542634
E-mail : jitnavjivan10@gmail.com | Website : www.navajivantrust.org

प्रस्तावना

इस पुस्तकमें मैंने ३६६ 'विचार-मोतियों' की मालाके रूपमें पाठकोंके सामने महात्मा गांधीके जीवन-दर्शनका सार प्रस्तुत करनेका प्रयत्न किया है। वर्षके प्रत्येक दिनके मननके लिए—इसमें फरवरीकी २९ वीं तारीख शामिल है—एक 'मोती' गांधीजीके लेखों और भाषणोंमें से चुना गया है। इन मोतियोंको ऐसे क्रममें रखा गया है, जिससे एक विचारसे दूसरे विचार पर जानेमें पाठकोंको अधिकसे अधिक सुविधा हो। पाठक दोनों दृष्टियोंसे इस मालाका उपयोग कर सकते हैं। वे चाहें तो प्रत्येक सुविचारके दैनिक मननके लिए इसका लाभ उठा सकते हैं, अथवा चाहें तो एक बैठकमें अधिक सुविचारोंके पठनके लिए भी इसका लाभ उठा सकते हैं।

हिन्दी अनुवाद मूल अंग्रेजी संस्करण परसे किया गया है।

१-११-१९६० आर. के. प्रभु

उद्धरणोंके स्रोत

आ.क.	आत्मकथा (गुजराती): गांधीजी, नंवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद-१४, १९५६।
ए.फा.	एपिक फास्ट: प्यारेलाल, अहमदाबाद-१४, १९३२ ।
ए.रि.	एथिकल रिलीजनः गांधीजी, एस. गणेशन्, मद्रास, १९३०।
गां.इं.वि.	गांधीजी इन इंडियन विलेजेस: महादेव देसाई, एस. गणेशन्, मद्रास, १९२७।
टा.इं.	टाइम्स ऑफ इंडिया: बम्बईका अंग्रेजी दैनिक ।
दि.डा.	दिल्ली डायरी: गांधीजी, न. ट्र., अहमदाबाद-१४, १९४८।
बॉ.क्रॉ.	बॉम्बे क्रॉनिकल: बम्बईका अंग्रेजी दैनिक
यं.इं.	यंग इंडिया: अंग्रेजी साप्ताहिक, संपा. गांधीजी, अहमदाबाद-१४; फरवरी १९३२ से बन्द ।
य.मं.	फ्रॉम यरवडा मंदिरः गांधीजी, न. ट्र., अहमदाबाद-१४, १९३५।
ले.गां.	लेनिन एण्ड गांधी: रेने फुलॉप-मिलर, लन्दन, १९३०।
वि.गां.सि.	विथ गांधीजी इन सिलोन: महादेव देसाई, एस. गणेशन्, मद्रास, १९२८ ।
स.सा.अ.	सत्याग्रह इन साउथ अफ्रीका: गांधीजी, न. ट्र., अहमदाबाद-१४, १९२८।
से रे.से.इं.	सेल्फ-रेस्ट्रेन्ट वर्सस सेल्फ-इंडल्जेन्स: गांधीजी, न. ट्र., अहमदाबाद-१४, भाग १ (१९३०), भाग २ (१९३९)।
स्पी.रा.म.	स्पीचेज़ एण्ड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी: जी. ए. नटेसन्, मद्रास, १९३३ ।
ह.	हरिजनः अंग्रेजी साप्ताहिक, संपा. गांधीजी और दूसरे, अहमदाबाद-१४; मार्च १९५६ से बन्द ।
हिं. स्व.	हिंद स्वराज: गांधीजी, न. ट्र., अहमदाबाद-१४, १९२८।

मोहन-माला

जनवरी १

इस विश्वमें ऐसी एक शक्ति है, जिसका निश्चित और स्पष्ट शब्दोंमें वर्णन नहीं किया जा सकता और जो विश्वकी हर वस्तुमें व्याप्त है। मैं उसका अनुभव करता हूँ, यद्यपि वह मुझे दिखा नहीं देती। यही वह अदृश्य शक्ति है, जो अपना अनुभव कराती है और फिर भी सारे प्रमाणोंसे परे है; क्योंकि वह ऐसे समस्त पदार्थोंसे सर्वथा भिन्न है, जिन्हें मैं अपनी इन्द्रियों द्वारा देखता और अनुभव करता हूँ। वह इन्द्रियातीत है, इन्द्रियोंकी पहुँचके बाहर है। परन्तु एक सीमा तक ईश्वरके अस्तित्वको तर्क द्वारा सिद्ध किया जा सकता है।

यं. इं., ११-१०-'२८

जनवरी २

मैं अस्पष्ट रूपमें यह जरूर देख और समझ सकता हूँ कि यद्यपि मेरे आसपास प्रत्येक वस्तु निरन्तर बदलती, निरन्तर नष्ट होती रहती है, फिर भी इस परिवर्तनके पीछे ऐसी एक सजीव, चेतन शक्ति है, जो कभी नहीं बदलती, जो सबको एकताके सूत्रमें बांधे रखती है, जो सर्जन करती है, नाश करती है और पुनः नवसर्जन करती है। यह घट-घटमें बसी हुई चेतन शक्ति या तत्त्व ही ईश्वर है। और ऐसी को वस्तु, जिसे मैं केवल इन्द्रियोंसे देखता और अनुभव करता हूँ, शाश्वत नहीं हो सकती या नहीं होगी; इसलिए एकमात्र ईश्वरकी ही सत्ता शाश्वत है।

यं. इं., ११-१०-'२८

जनवरी ३

और, यह शक्ति कल्याणकारिणी है या अकल्याण करनेवाली है? मैं तो इसे शुद्ध कल्याणकारिणी शक्तिके रूपमें ही देखता हूँ। क्योंकि मैं देख सकता हूँ कि मृत्युके बीच जीवनका अस्तित्व बना रहता है, असत्यके बीच सत्य टिका रहता है और अंधकारके बीच प्रकाश जीवित रहता है। इसलिए मैं इस निर्णय पर पहुँचता हूँ कि ईश्वर जीवन है, सत्य है, प्रकाश है। वह प्रेम है, वह सर्वोच्च शिव है – शुभ है।

यं. इं., ११-१०-'२८

जनवरी ४

मैं किसी भी तर्क-पद्धतिसे बुराईके अस्तित्वको समझा नहीं सकता। ऐसा करनेकी इच्छा रखनेका अर्थ है ईश्वरके समान बननेकी इच्छा रखना। अतः मैं बुराईको बुराईके रूपमें स्वीकार कर लेने जितना नम्र हूँ; और मैं ईश्वरको इसीलिए शांतिसे सहन करनेवाला तथा धैर्यवान कहता हूँ कि वह बुराईको दुनियामें टिकने देता है।

यं. इं., ११-१०-'२८

जनवरी ५

मैं जानता हूँ कि ईश्वरमें कोई बुराई नहीं है; और फिर भी यदि संसारमें बुराई है तो ईश्वर उसका सर्जक है और सर्जक होते हुए भी वह बुराईसे अछूता है। मैं यह भी जानता हूँ कि यदि मैं अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर भी बुराईके साथ और बुराईके खिलाफ युद्ध न करूँ, तो मैं कभी भी ईश्वरको नहीं जान सकूँगा।

यं. इं., ११-१०-'२८

जनवरी ६

हम ईश्वरके सारे नियमोंको नहीं जानते, न हम यह जानते हैं कि वे नियम कैसे काम करते हैं। ऊँचेसे ऊँचे वैज्ञानिक अथवा महानसे महान अध्यात्मवादीका ज्ञान भी रजके एक कणके समान है। यदि ईश्वर मेरे लिए अपने पार्थिव पिताकी तरह शरीरधारी व्यक्ति नहीं है, तो वह मेरे लिये इससे अनन्त गुना अधिक है। वह मेरे जीवनकी सूक्ष्मसे सूक्ष्म बातोंमें भी मुझ पर शासन करता है। इस कथनके एक एक अक्षरमें मेरा विश्वास है कि ईश्वरकी इच्छाके बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता। हर साँस, जो मैं लेता हूँ, ईश्वरकी दया पर निर्भर करती है।

ह., १६-२-'३४

जनवरी ७

ईश्वर और उसका कानून एक ही है। वह कानून ही ईश्वर है! जिस किसी विशेषताका उस पर आरोपण किया जाता है, वह केवल गुण नहीं है। ईश्वर स्वयं गुणरूप है। वह सत्य है, प्रेम है और कानून है; और ऐसी हजार वस्तुएँ हैं, जिनका मानवकी शोधक बुद्धि नाम बता सकती है।

ह., १६-२-'३४

जनवरी ८

पूर्णता उस सर्व-शक्तिमान ईश्वरका गुण है, और फिर भी वह कितना बड़ा प्रजातंत्रवादी है! वह हमारे कितने अन्यायों और पाखंडोंको सहन कर लेता है? यहाँ तक कि वह अपने तुच्छ प्राणियों द्वारा उसके अस्तित्वके बारेमें उठायी गयी शंकाको भी बरदाश्त कर लेता है, यद्यपि वह हमारे आसपास, हमारे इर्द-गिर्द और हमारे भीतरके प्रत्येक अणु-परमाणुमें बसा हुआ है। परन्तु जिसके सामने वह प्रकट होना चाहता है, उसके सामने प्रकट होनेका अधिकार उसने अपने हाथमें सुरक्षित रखा है। वह ऐसी चेतन शक्ति है, जिसके न हाथ हैं, न पाँव हैं और न कोई दूसरी इन्द्रियाँ हैं; फिर भी ऐसा मनुष्य उसे देख सकता है, जिसके सामने वह अपने आपको प्रकट करना पसन्द करता है।

ह., १४-११-'३६

जनवरी ९

मेरी दृष्टिमें ईश्वर सत्य है और प्रेम है; ईश्वर नीति है और सदाचार है; ईश्वर निर्भयता है। ईश्वर प्रकाश और जीवनका स्रोत है और फिर भी वह इन सबसे ऊपर और परे है। ईश्वर विवेक-बुद्धि है। वह नास्तिककी नास्तिकता भी है; क्योंकि अपने अपार और असीम प्रेमके कारण वह नास्तिकको भी जीने देता है।

यं. इं., ५-३-'२५

जनवरी १०

वह हमारे हृदयको खोजने और टटोलनेवाला है। वह वाणी और बुद्धिके क्षेत्रसे परे है। हमारी अपेक्षा ईश्वर हमें और हमारे हृदयोंको अधिक जानता है। वह हमारे शब्दों पर विश्वास नहीं करता, क्योंकि हममें से कुछ लोग जाननेमें और दूसरे अनजानमें जो कुछ कहते हैं, वही अकसर उनका आशय नहीं होता।

यं. इं., ५-३-'२५

जनवरी ११

उन लोगोंके लिए वह व्यक्तिरूप ईश्वर है, जो उसकी व्यक्तिगत उपस्थितिकी आवश्यकता महसूस करते हैं। ऐसे लोगोंके लिए वह साकार ईश्वर है, जो उसके स्पर्शकी आवश्यकता अनुभव करते हैं। वह शुद्धतम सारतत्त्व है। वह केवल उन्हीं लोगोंके लिए है जो श्रद्धालु हैं। वह सब मनुष्योंके लिए सब-कुछ है। वह हमारे भीतर है और फिर भी हमारे ऊपर और हमसे परे है।

यं. इं., ५-३-'२५

जनवरी १२

ईश्वरके नाम पर भयंकर अनाचार होते हैं और अमानुषिक क्रूरतायें की जाती हैं, इसीलिए उसके अस्तित्वका लोप नहीं हो सकता। वह दीर्घकालसे शान्त रहकर हमारे दोषोंको सहन करता आया है। वह धैर्यशाली है, परन्तु वह भयंकर भी है। इहलोक और परलोकमें वह अधिकसे अधिक कसौटी करनेवाला है। हम अपने पड़ोसियों – मानवों और पशुओं – के साथ जैसा व्यवहार करते हैं, वैसा ही व्यवहार वह हमारे साथ करता है। वह अज्ञानके लिए भी क्षमा नहीं करता। और इन सबके बावजूद वह सदा क्षमा करनेवाला है, क्योंकि वह हमें सदा पश्चात्ताप करनेका अवसर देता है।

यं. इं., ५-३-'२५

जनवरी १३

वह संसारका सबसे बड़ा प्रजातंत्रवादी है, क्योंकि वह हमें भले और बुरेके बीच चुनाव करनेके लिये स्वतंत्र छोड़ देता है। वह दुनियाका क्रूरसे क्रूर स्वामी है, क्योंकि वह प्राय: हमारे मुँहके सामने आयी रोटीको छीन लेता है और इच्छाकी स्वतंत्राकी आड़में इतनी अपर्याप्त छूट देता है कि हमसे कुछ करते-धरते नहीं बनता; और हमारी इस परेशानीमें से वह अपने लिए केवल विनोदकी सामग्री ही मुहैया करता है। इसीलिए हिन्दू धर्म इस सबको उसकी लीला अथवा उसकी माया कहता है।

यं. इं., ५-३-'२५

जनवरी १४

ईश्वर हमारे इस पार्थिव शरीरसे बाहर नहीं है। अतः बाहरी प्रमाण यदि कोई हो तो भी वह बहुत उपयोगी सिद्ध नहीं होगा। हम उसे इन्द्रियों द्वारा देखनेमें सदा असफल ही रहेंगे, क्योंकि वह इन्द्रियोंसे परे है – इन्द्रियातीत है। हम उसका अनुभव कर सकते हैं, यदि हम केवल इन्द्रियोंसे अपने आपको खींच लें – इन्द्रियोंके व्यापारसे ऊपर उठ जायें। हमारे भीतर दिव्य संगीत तो निरन्तर चलता ही रहता है। परन्तु प्रबल इन्द्रियाँ उस सूक्ष्म दिव्य संगीतको दबा देती हैं, जो ऐसी प्रत्येक वस्तुसे भिन्न और अनन्त गुना श्रेष्ठ है, जिसे हम अपनी इन्द्रियों द्वारा देखते या सुनते हैं।

ह., १३-६-'३६

जनवरी १५

मेरी जानकारीमें ईश्वर इस धरती पर कठोरसे कठोर काम लेनेवाला स्वामी है। और वह आपकी पूरी पूरी परीक्षा करता है। पर जब आप अनुभव करते हैं कि आपकी श्रद्धा आपकी सहायता नहीं कर रही है या आपका शरीर आपका साथ नहीं दे रहा है, और आप निराधार बनकर हताश हो रहे हैं, तब ईश्वर किसी न किसी तरह आपकी सहायताके लिए पहुँच जाता है और आपके सामने यह सिद्ध कर देता है कि आपको अपनी श्रद्धा नहीं

छोड़नी चाहिये और जब आप उसका स्मरण करेंगे तब वह हमेशा आपकी मदद पर रहेगा – परन्तु उसकी अपनी शर्त पर, आपकी शर्त पर नहीं। अपने अनुभवोंसे मैंने ऐसा ही पाया है। मुझे ऐसा एक भी उदाहरण याद नहीं है जब संकटके समय उसने कभी मुझे छोड़ा हो।

स्पी.रा.म., पृ. १०६९

जनवरी १६

जब क्षितिज अत्यन्त अंधकारमय होता है, जब चारों ओर निराशाका घोर अंधकार छा जाता है, तब अकसर दिव्य प्रकाश हमारा मार्गदर्शन करता है।

यं. इं., २७-८-'२५

जनवरी १७

जब हम अपने पैरों तलेकी धूलसे भी अधिक नम्र बन जाते हैं, तब ईश्वर हमारी मदद करता है। केवल दुर्बल और निराधारके लिए ही ईश्वरीय सहायताका वचन दिया गया है।

स.सा.अ., पृ. ६

जनवरी १८

मनुष्य-जातिकी बुद्धि इतनी जड़ है कि वह ईश्वर द्वारा समय समय पर भेजे जानेवाले संकेतोंको समज ही नहीं सकती। हमारे कानोंमें ढोल बजानेकी जरूरत है – तभी हम अपनी मूर्छासे जागेंगे, उसकी चेतावनियोंको सुनेंगे और इस बातको समझेंगे कि अपने आपको जाननेका एकमात्र मार्ग स्वयंको ईश्वरके सब प्राणियोंमें खो देना है।

यं. इं. २५-८-'२७

जनवरी १९

अगर तुम ईश्वरकी मदद मांगना चाहते हो, तो तुम्हें अपने पूरे नग्न – सच्चे रूपमें उसके सामने जाना होगा और इस बातका कोई भय या शंका रखे बिना उसकी शरण लेनी

होगी कि तुम्हारे जैसे पतितकी सहायता वह कैसे कर सकता है। जिसने अपनी शरणमें आये हुए लाखों-करोड़ों मनुष्योंकी सहायता की है, वह भला तुम्हें ही क्यों छोड़ देगा?

यं. इं., १-३-'२९

जनवरी २०

मनुष्यका अंतिम लक्ष्य ईश्वरका साक्षात्कार करना है | और उसकी सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक सभी प्रवृत्तियाँ ईश्वर-दर्शनके इस अंतिम लक्ष्यको सामने रखकर ही चलनी चाहिये। समस्त मानवप्राणियोंकी सेवा केवल इसलिए इस प्रयत्नका आवश्यक अंग बन जाती है कि ईश्वरको पानेका एकमात्र मार्ग उसे उसकी सृष्टिमें देखना और उसकी सृष्टिके साथ एकरूप हो जाना है। यह स्थिति केवल सबकी सेवा करके ही साधी जा सकती है। मैं ईश्वरकी समग्र सृष्टिका एक अभिन्न अंग हूँ; और मैं ईश्वरको बाकीकी मानवसृष्टिके बाहर नहीं पा सकता।

ह., २९-८-'३६

जनवरी २१

ईश्वर बड़ी कठोरतासे काम लेनेवाला स्वामी है। वह आवेशमें आकर किये जानेवाले त्यागसे कभी संतुष्ट नहीं होता। उसकी चक्की यद्यपि निश्चित रूपसे तथा निरन्तर गतिसे चलती रहती है, किन्तु उसकी गति अतिशय धीमी होती है। और ईश्वर जल्दबाजीमें किये जानेवाले प्राणत्यागसे कभी संतुष्ट नहीं होता। वह शुद्धतम बलिदानकी मांग करता है। इसलिए आपको और मुझे प्रार्थनाकी भावनासे, नम्र भावसे, दृढ़तापूर्वक काम करते रहना चाहिये और जब तक ईश्वरकी कृपासे जीवन टिका रहे तब तक जीवन जीना चाहिये।

यं. इं., २२-९-'२७

जनवरी २२

ईश्वर अच्छी और बुरी सभी बातोंका निश्चित लेखा रखता है। इस पृथ्वी पर उससे अच्छा दूसरा कोई मानवके अच्छे-बुरे कर्मोंका हिंसाब रखनेवाला नहीं है।

ह., २१-९-'३४

जनवरी २३

ईश्वर यदि परिवर्तनहीन और अटल जीवित नियम न होकर कोई स्वच्छन्द व्यक्ति होता, तो वह अपनी क्रोधाग्निमें ऐसे सब लोगोंको जलाकर नष्ट कर देता, जो धर्मके नाम पर उसे और उसके नियमको माननेसे इनकार करते हैं।

यं. इं., ११-७-'२९

जनवरी २४

ईश्वर अपने भक्तोंकी पूरी पूरी परीक्षा करता है, परन्तु उनकी सहन-शक्तिसे बाहर कभी नहीं। जो अग्नि-परीक्षा वह अपने भकतोंके लिए निर्धारित करता है, उसमें से पार होनेकी शक्ति भी वही उन्हें देता है।

यं. इं., १९-२-'२५

जनवरी २५

ईश्वरको सच्चे अर्थमें, ईश्वर होनेके लिए मनुष्यके हृदय पर शासन करना चाहिये और उसे पूरी तरह बदल डालना चाहिये। अपने भक्तके प्रत्येक छोटेसे छोटे कार्यमें भी उसे अपने आपको व्यक्त करना चाहिये। यह निश्चित साक्षात्कारके द्वागा ही किया जा सकता है – ऐसा साक्षात्कार जो पाँच इन्द्रियों द्वारा किसी भी समय कराये जा सकनेवाले साक्षात्कारसे अधिक सच्चा होता है।

यं. इं., ११-१०-'२८

जनवरी २६

जब इन्द्रियोंके क्षेत्रेसे बाहर ईश्वरका साक्षात्कार होता है तब वह अचूक सिद्ध होता है। वह बाहरी प्रमाणसे सिद्ध नहीं होता, परन्तु ऐसे लोगोंके सर्वथा बदले हुए आचरण तथा चरित्रके रूपमें सिद्ध होता है, जिन्होंने अपने अंतरमें ईश्वरकी सच्ची उपस्थिति अनुभव की है। ऐसा प्रमाण संसारके समस्त देशों और कालोंके सन्तों तथा पैगम्बरोंकी अटूट परम्पराके

अनुभवोंसे हमें मिल सकता है। उस प्रमाणसे इनकार करनेका अर्थ है अपने आपसे इनकार करना।

यं. इं., ११-१०-'२८

जनवरी २७

परन्तु जब तक हम इस नश्वर शरीरमें कैद हैं तब तक हमारे लिए पूर्ण सत्यको स्पष्ट रूपसे समझना असंभव है। हम केवल अपनी कल्पनामें ही उसका दर्शन कर सकते हैं। इस क्षणभंगुर देहके माध्यमसे हम शाश्वत सत्यका प्रत्यक्ष दर्शन नहीं कर सकते। यही कारण है कि अंतिम सहारेके रूपमें हमें श्रद्धा पर ही निर्भर रहना चाहिये।

य. मं., प्रक. २

जनवरी २८

कोई भी मनुष्य जब तक शरीरमें कैद है तब तक पूर्णताको प्राप्त नहीं कर सकता; इसका सादा कारण यह है कि जब तक मनुष्य अपने अहंकार पर पूर्णतया विजय प्राप्त नहीं कर लेता है, तब तक इस आदर्श स्थितिको सिद्ध करना असंभव है। और अहंकारसे तब तक पूर्णतया मुक्ति नहीं मिल सकती, जब तक कि मनुष्य शरीरके बन्धनोंसे बंधा हुआ है।

यं. इं., २०-९-'२८

जनवरी २९

शरीरधारी प्राणियोंके नाते हमारा अस्तित्व, हमारा जीवन, बिलकुल क्षणभंगुर है। अनन्त कालकी तुलनामें मानव-जीवनके सौ वर्ष किस गिनतीमें हैं? परन्तु यदि हम अहंकारके बंधनोंको तोड़ दें और मानवताके समुद्रमें विलीन हो जायँ, तो हम उसके गौरव और प्रतिष्ठाके भागी बनते हैं। हम भी कुछ हैं ऐसा अनुभव करनेका अर्थ है ईश्वरके और हमारे बीच दीवाल खड़ी करना; और हम भी कुछ हैं इस भावनाको छोड़नेका अर्थ है ईश्वरके साथ एकरूप हो जाना।

य. मं., प्रक. १२

जनवरी ३०

महासागरमें रहनेवाला जलबिन्दु अपने जनककी महानता और विशालताका भागी बनता है, यद्यपि उसे इस बातका भान नहीं होता। परंतु ज्यों ही वह जलबिन्दु महासागरसे अलग हो जाता है त्यों ही वह सूख जाता है। जब हम यह कहते हैं कि जीवन पानीका बुलबुला है, तब हम कोई अतिशयोक्ति नहीं करते।

य. मं., प्रक. १२

जनवरी ३१

ज्यों ही हम ईश्वर-रूपी महासागरके साथ एकरूप हो जाते हैं, त्यों ही हमारे लिए विश्राम जैसी कोई चीज नहीं रह जाती; और न उसके बाद हमें विश्रामकी कोई आवश्यकता ही रह जाती है। यहाँ तक कि हमारी निद्रा भी कर्मका रूप ले लेती है; क्योंकि हम अपने हृदयोंमें ईश्वरका ध्यान धर कर ही सोते हैं। यह अविश्राम ही सच्चा विश्राम है। यह अविरत अशांति ही अनिर्वचनीय शांतिकी कुंजी है। संपूर्ण समर्पणकी इस उदात्त स्थितिका शब्दोंमें वर्णन करना कठिन है, परन्तु वह मानव-अनुभवके क्षेत्रसे परे नहीं है। अनेक समर्पित आत्माओंने यह उदात्त स्थिति प्राप्त की है और हम भी इसे प्राप्त कर सकते हैं।

य. मं., प्रक. १२

फरवरी १

जहां प्रेम है वहाँ ईश्वर भी है।

स. सा. अ., पृ. ३६०

फरवरी २

प्रेम कभी कुछ पानेका दावा नहीं करता, वह सदा देता ही है। प्रेम सदा सहन करता है; वह कभी विरोध नहीं करता, कभी बदला लेकर संतुष्ट नहीं होता।

यं. इं., ९-७-'२५

फरवरी ३

मेरा यह विश्वास है कि मनुष्य-जातिकी समग्र प्रवृत्ति हमें नीचे गिरानेके लिए नहीं परन्तु ऊपर उठानेके लिए है; और वह प्रेमके कानूनकी निश्चित प्रक्रियाका – भले वह अनजाने ही हो – परिणाम है। मनुष्य-जाति अनेक विघ्न-बाधाओंके बावजूद आज तक टिकी हुई है। यह सत्य बताता है कि छिन्न-भिन्न करनेवाली शक्तिसे मिलानेवाली शक्ति अधिक बड़ी है, केन्द्रबिन्दुसे दूर ले जानेवाली शक्तिकी अपेक्षा केन्द्रबिन्दुके पास ले जानेवाली शक्ति अधिक बलवती है।

यं. इं., १२-११-'३१

फरवरी ४

वैज्ञानिक हमसे कहते हैं कि हमारी इस पृथ्वीकी रचना करनेवाले परमाणुओंके बीच यदि मिलानेवाली शक्ति मौजूद न हो, तो यह पृथ्वी टूटकर टुकड़े टुकड़े हो जाय और हमारा अस्तित्व इस दुनियासे मिट जाय। और जिस प्रकार जड़ प्रकृतिमें मिलानेवाली शक्ति है, उसी प्रकार चेतन पदार्थोंमें भी वह शक्ति होनी चाहिये; और चेतन प्राणियोंमें रही उस मिलानेवाली शक्तिका नाम है प्रेम।

यं. इं., ५-५-'२०

फरवरी ५

उस शक्तिके दर्शन हम पिता-पुत्रके बीच, भा-बहनके बीच तथा मित्र-मित्रके बीच करते हैं। परन्तु हमें सारे चेतन प्राणियोंके बीच उस शक्तिका उपयोग करना सीखना चाहिये। और उस शक्तिके उपयोगमें ही ईश्वरका हमारा ज्ञान समाया हुआ है। जहाँ प्रेम है वहाँ जीवन है; धृणा नाशकी – मृत्युकी दिशामें ले जाती है।

यं. इं., ५-५-'२०

फरवरी ६

मैंने पाया है कि नाशके बीच भी जीवन टिका रहता है और इसलिए नाशके नियमकी अपेक्षा को अधिक ऊँचा, अधिक उदात्त नियम होना चाहिये। केवल उस नियमके अधीन ही सुव्यवस्थित समाजकी रचना संभव हो सकती है और जीवन जीने योग्य बन सकता है।

यं. इं., १-१०-'३१

फरवरी ७

यदि प्रेम जीवनका नियम नहीं होता, तो मृत्यु के बीच जीवन टिक नहीं सकता था। जीवन मृत्यु पर एक शाश्वत, सनातन विजय है।

ह., २६-९-'३६

फरवरी ८

यदि मनुष्य और पशुमें कोई बुनियादी भेद है, तो यही है कि मनुष्य इस प्रेमके नियमको उत्तरोत्तर अधिक समझता और स्वीकार करता रहा है और व्यवहारमें इस नियमको अपने व्यक्तिगत जीवन पर लागू करता आया है। संसारके सभी प्राचीन और आधुनिक संत अपनी अपनी बुद्धि और क्षमताके अनुसार हमारे जीवनके इस उदात्त तथा सर्वोपरि नियमके जीते-जागते उदाहरण थे।

ह., २६-९-'३६

फरवरी ९

रूप तो अनेक हैं, परन्तु उन रूपोंको अनुप्राणित करनेवाली आत्मा एक ही है। जहाँ बाहरी विविधताके मूलमें सबको अपने भीतर समा लेनेवाली यह मूलभूत एकता काम करती हो, वहाँ ऊँच और नीचके भेदोंके लिए गुंजाइश ही कैसे हो सकती है? क्योंकि यह एक ऐसा सत्य है, जिसका दैनिक जीवनमें कदम कदम पर हमें अनुभव होता है। समस्त धर्मोंका अंतिम लक्ष्य यह मूलभूत एकता सिद्ध करना है।

ह., १५-१२-'३३

फरवरी १०

हमें अपने प्रेमका दायरा इतना व्यापक कर देना चाहिये कि वह सारे गाँवको अपने भीतर समा ले; गाँवको अपने दायरेमें सारे जिलेका समावेश कर लेना चाहिये, जिलेको प्रान्तका और प्रान्तको समूचे देशका-यहाँ तक कि अंतमें फैलते फैलते हमारे प्रेमका दायरा सारे विश्व तक फैल जाना चाहिये।

यं. इं., २७-६-'२९

फरवरी ११

मानव-जातिका नियम घातक प्रतिस्पर्धा नहीं परन्तु जीवनदायी सहयोग है। भावनाकी उपेक्षा करनेका अर्थ यह भूल जाना है कि मानव भावनाशील प्राणी है। यदि हम 'ईश्वरकी प्रतिमूर्ति हैं', तो कुछ लोगोंके हितके लिए नहीं, अधिक लोगोंके हितके लिए भी नहीं, किन्तु सब लोगोंके हितको-सर्वोदयको-बढ़ानेके लिए हम बनाये गये हैं।

स्पी. रा. म., पृ. ३५०

फरवरी १२

यह जानते हुए कि हम सब कभी एकसा विचार नहीं करेंगे और हम सब सत्यको सदा आंशिक रूपमें तथा अलग अलग दृष्टिकोणोंसे ही देखेंगे, मानव-व्यवहारका सुनहला

नियम यही होगा कि हम परस्पर सहिष्णुताका विकास करें, एक-दूसरेके विचारों और मतोंको सहन करें।

यं. इं., २३-९-'२६

फरवरी १३

सत्यका शोधक, प्रेमके नियमका पुजारी, कलके लिए कोई चीज नहीं रख सकता। ईश्वर कलके लिए कभी व्यवस्था नहीं करता। प्रतिदिन निश्चित मात्रामें जितने अन्नकी जरूरत है, उससे अधिक वह कभी उत्पन्न नहीं करता। इसलिए यदि हम ईश्वरकी व्यवस्थामें श्रद्धा रखें, तो हमारा यह दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि हमारी रोजकी रोटी वह हमें देगा ही, और हमारी आवश्यकताके अनुसार ही देगा।

यं. इं., ४-९-'३०

फरवरी १४

या तो हम ईश्वरके उस नियमको जानते नहीं या उसकी उपेक्षा करते हैं, जिसके अनुसार मनुष्यको केवल उसकी रोजकी रोटी ही दी गई है – उससे अधिक नहीं। हमारे इस अज्ञान या उपेक्षाके फलस्वरूप दुनियामें असमानतायें खड़ी होती हैं, जिनकी वजहसे दुनियाकी सारी मुसीबतें पैदा होती हैं।

यं. इं., ४-९-'३०

फरवरी १५

धनी लोगोंके पास वस्तुओंका अतिरिक्त भंडार भरा रहता है, जिनकी उन्हें कोई आवश्यकता नहीं होती और इसलिए जिनकी उपेक्षा की जाती है और बरबादी होती है, जब कि लाखों-करोड़ों लोग अन्नके अभावमें भूखों मरते हैं और कपड़ोंके अभावमें ठंडसे ठिठुर कर मर जाते हैं। यदि हर आदमी उतनी ही वस्तु पर अपना अधिकार रखता जितनी उसके लिए जरूरी है, तो किसी मनुष्यको किसी वस्तुका अभाव नहीं रहता और सब लोग संतोषके साथ जीवन बिताते।

यं. इं., ४-९-'३०

फरवरी १६

आजकी स्थितिमें धनी लोग गरीबोंसे कम असंतुष्ट नहीं हैं। गरीब आदमी लखपति बनना चाहता है और लखपति करोड़पति बनना चाहता है। गरीबोंको जब पेटभर खानेको मिल जाता है तब वे अकसर उससे सन्तुष्ट नहीं होते; लेकिन निश्चित रूपसे उन्हें पेटभर भोजन पानेका अधिकार है और समाजको यह ध्यान रखना चाहिये कि इतना उन्हें अवश्य मिल जाय।

यं. इं., ४-९-'३०

फरवरी १७

हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति और हमारा स्वराज्य अपनी जरूरतें दिनोंदिन बढ़ाते रहने पर – भोगमय जीवन पर निर्भर नहीं करते; परन्तु हमारी जरूरतोंको नियंत्रित रखने पर – त्यागमय जीवन पर निर्भर करते हैं।

यं. इं., ६-१०-'२१

फरवरी १८

जब तक एक भी सशक्त पुरुष अथवा स्त्रीको काम या भोजन न मिले, तब तक हमें चैनसे बैठनेमें या भरपेट भोजन करनेमें लज्जा मालूम होनी चाहिये।

यं. इं., ५-२-'२५

फरवरी १९

मैं कहता हूँ कि हम एक तरहसे चोर हैं। यदि मैं ऐसी कोई वस्तु लेता हूँ, जिसकी मुझे अपने तात्कालिक उपयोगके लिए जरूरत नहीं है और उसे अपने पास रखता हूँ, तो मैं दूसरे किसीसे उस वस्तुकी चोरी करता हूँ।

स्पी. रा. म., पृ. ३८४

फरवरी २०

मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि प्रकृतिका यह बुनियादी नियम है – और इसमें अपवादकी जरा भी गुंजाइश नहीं है – कि प्रकृति हमारी आवश्यकताओंके लिए प्रतिदिन पर्याप्त मात्रामें उत्पन्न करती है; और यदि प्रत्येक मनुष्य उतना ही ले जितनेकी उसे आवश्यकता है और उससे अधिक न ले, तो इस दुनियामें गरीबी नहीं रहेगी और एक भी आदमी इस दुनियामें भूखसे नहीं मरेगा।

स्पी. रा. म., पृ. ३८४

फरवरी २१

मैं समाजवादी नहीं हूँ और मैं सम्पत्तिवालोंसे उनकी सम्पत्ति छीनना नहीं चाहता। परन्तु मैं यह जरूर कहता हूँ कि हममें से जो लोग व्यक्तिगत रूपमें अंधकारसे निकलकर प्रकाशकी ओर जाना चाहते हैं, उन्हें इस नियमका पालन अवश्य करना चाहिये। मैं किसीसे कोई वस्तु छीनना नहीं चाहता। ऐसा करके मैं अहिंसाके नियमका भंग करूँगा। यदि दूसरे किसीके पास मुझसे कोई चीज ज्यादा हो तो भले रहे। परन्तु जहाँ तक मेरे अपने जीवनको नियमित बनानेका सम्बन्ध है, मैं ऐसी कोई वस्तु रखनेका साहस नहीं कर सकता जिसकी मुझे आवश्यकता नहीं है।

स्पी. रा. म., पृ. ३८४

फरवरी २२

भारतमें ऐसे तीस लाख लोग हैं, जिन्हें दिनमें एक बार खाकर संतोष कर लेना पड़ता है; और यह एक बारका खाना ऐसा होता है, जिसमें एक रोटी और चुटकी-भर नमकके सिवा दूसरा कुछ नहीं होता – घी-तेलका तो उसमें एक छींटा भी नहीं होता। जब तक इन तीस लाख लोगोंको ज्यादा अच्छा भोजन और ज्यादा अच्छे कपड़े नहीं मिलते, तब तक अपने पासकी कोई भी चीज रखनेका आपको या मुझे अधिकार नहीं है। आपको और मुझे, जिन्हें यह बात अधिक अच्छी तरह जाननी चाहिये, अपनी जरूरतों पर अंकुश रखना

चाहिये और स्वेच्छापूर्वक भूखा भी रहना चाहिये, ताकि इन लोगोंकी सार-संभाल हो, इन्हें पूरा खाना और पूरे कपड़े मिलें।

स्पी. रा. म., पृ. ३८५

फरवरी २३

इस संबंधमें सुनहला नियम तो यह है कि जो चीज लाखों लोग नहीं पा सकते, उसे रखनेसे हमें दृढ़तापूर्वक इनकार कर देना चाहिये। इनकार करनेकी यह योग्यता हममें एकदम तो नहीं आ जायगी। इस दिशामें पहला कदम होगा ऐसी मनोवृत्तिका विकास करना, जो लाखों लोगोंको न मिल सकनेवाली साधन-सम्पत्ति अथवा सुविधायें रखना पसन्द न करे। इस दिशामें दूसरा तात्कालिक कदम होगा इस मनोवृत्तिके अनुरूप अपने जीवनमें अधिकसे अधिक तेजीसे परिवर्तन करना।

यं. इं., २४-६-'२६

फरवरी २४

मनुष्यको रसनाकी तृप्तिके लिए नहीं परन्तु शरीरको टिकाये रखनेके लिए ही खाना चाहिये। प्रत्येक इन्द्रिय जब शरीरके लिए और शरीरके द्वारा आत्माके दर्शनके लिए ही काम करती है, तब उसके रस शून्यवत् - लुप्त – हो जाते हैं और तभी वह स्वाभाविक रूपमें काम करती है ऐसा कहा जायगा। ऐसी स्वाभाविकता सिद्ध करनेके लिए जितने प्रयोग किये जायँ उतने कम ही हैं। और ऐसा करते हुए अनेक शरीरोंका बलिदान भी देना पड़े, तो उसे भी हम तुच्छ मानें।

आ. क., पृ. २९५

फरवरी २५

हमें शरीरके चिकित्सकोंके बजाय आत्माके चिकित्सकोंकी आवश्यकता है। अस्पतालों और डॉक्टरोंकी संख्यामें होनेवाली वृद्धि सच्ची सभ्यताका चिह्न नहीं है। हम

और दूसरे लोग शरीरोंका जितना कम लाड़ लड़ायेंगे – उनके सुखभोगकी जितनी कम चिन्ता करेंगे – उतना ही अधिक हमारा और जगतका कल्याण होगा।

यं. इं., २९-९-'२७

फरवरी २६

शरीरका ईश्वरके मंदिरके रूपमें उपयोग करनेके बदले हम भोगविलासके साधनके रूपमें उसका उपयोग करते हैं; और भोग-विलासमें वृद्धि करने तथा मानव-देहका दुरुपयोग करनेके अपने प्रयत्नमें मदद मांगनेके लिए डॉक्टरोंके पास दौड़नेमें हमें लज्जा नहीं आती।

यं. इं., ८-८-'२९

फरवरी २७

मनुष्यका स्वभाव मूलतः बुरा नहीं है। पशु भी प्रेमके प्रभावके सामने झुकते देखे गये हैं। इसलिए आपको मनुष्य-स्वभावके बारेमें कभी निराश नहीं होना चाहिये।

ह., ५-११-'३८

फरवरी २८

मनुष्यका यह जीवन उसकी कसौटीका काल है। कसौटीके इस कालमें भली और बुरी शक्तियाँ उस पर अपना प्रभाव डालती हैं। किसी भी समय वह प्रलोभनोंका शिकार हो सकता है। इन प्रलोभनोंका विरोध करके और इनसे युद्ध करके उसे अपना मनुष्यत्व सिद्ध करना है।

ह., ४-४-'३६

फरवरी २९

आन्तर-राष्ट्रीय व्यवहारोंमें प्रेमका नियम स्वीकार करमेमें लम्बा समय लग सकता है। सरकारोंके तंत्र ऐसा करनेमें बाधक बनते हैं और एक प्रजाके हृदयकी बात दूसरी प्रजासे छिपाते हैं।

यं. इं., २३-६-'१९

मार्च १

सत्य एक विशाल वृक्ष है। मनुष्य उसकी जितनी सेवा, जितनी सार-संभाल करता है उतने ही अधिक उसमें से फल पैदा होते देखे जाते हैं। उसके फलोंका अंत ही नहीं होता। जैसे जैसे हम सत्यमें गहरे उतरते जाते हैं वैसे वैसे उसमें से रत्न मिलते रहते हैं, सेवाके अवसर प्राप्त होते रहते हैं।

आ. क., पृ. १९९

मार्च २

सत्यके शोधकको रजकणसे भी छोटा बनकर रहना पड़ता है। सारा जगत रजकणको पाँव तले कुचलता है, परन्तु सत्यका पुजारी जब तक इतना अल्प न बन जाय कि रजकण भी उसे कुचल सके, तब तक उसे स्वतंत्र सत्यकी झाँकी भी होना दुर्लभ है।

आ. क., प्रस्ता. पृ. ६

मार्च ३

सत्यकी भक्ति ही हमारे अस्तित्वका एकमात्र कारण है। हमारी समस्त प्रवृत्तियाँ सत्यमें ही केन्द्रित होनी चाहिये। सत्य हमारे जीवनका मूल आधार होना चाहिये। जब एक बार जीवनकी पवित्र यात्रामें हम इस मंजिल पर पहुँच जायेंगे, तो उसके बाद सही और शुद्ध जीवनके दूसरे सारे नियम बिना किसी प्रयत्नके हमारे जीवनमें आ जायेंगे और उनका पालन बिलकुल स्वाभाविक हो जायगा। परन्तु सत्यके बिना जीवनमें किसी भी सिद्धान्त अथवा नियमका पालन असंभव होगा।

यं. इं., ३०-७-'३१

मार्च ४

हमारे विचारमें सत्य होना चाहिये, हमारी वाणीमें सत्य होना चाहिये और हमारे कर्ममें भी सत्य होना चाहिये। जिस मनुष्यने इस सत्यको पूर्णतया समझ लिया है, उसके लिए दूसरा कुछ जाननेको बाकी नहीं रह जाता; क्योंकि सारा ज्ञान आवश्यक रूपमें इस

सत्यमें ही समा जाता है। जिस ज्ञानका इसमें समावेश नहीं होता, वह सत्य नहीं है और इसलिए वह सच्चा ज्ञान नहीं है; और सच्चे ज्ञानके अभावमें आंतरकि शांति प्राप्त नहीं हो सकती। अगर हम एक बार सत्यकी इस अचूक कसौटीका प्रयोग करना सीख लें, तो हम तुरन्त यह जान सकेंगे कि हमें क्या बनना चाहिये, क्या देखना चाहिये और क्या पढ़ना चाहिये।

यं. इं., ३०-७-'३१

मार्च ५

सत्यकी शोधके लिए तप – स्वयं कष्ट सहना – आवश्यक होता है। कभी कभी आमरण तप भी करना पड़ता है। इसमें स्वार्थके लिए तो लेशमात्र भी गुंजाइश नहीं हो सकती। सत्यकी ऐसी स्वार्थरहित शोधमें कोई भी मनुष्य लम्बे समय तक अपनी सच्ची दिशाको भूल नहीं सकता। ज्यों ही शोधक गलत मार्ग पकड़ता है त्यों ही वह ठोकर खाता है और इस तरह पुनः सही मार्गकी ओर मोड़ दिया जाता है।

य. मं., प्रक. १

मार्च ६

सम्पूर्ण और समग्र सत्यको जानना मनुष्यके भाग्यमें नहीं बदा है। उसका कर्तव्य यही है कि वह सत्यको जिस रूपमें देखता-समझता है उसीके अनुसार अपना जीवन बिताये; और ऐसा करूनेमें शुद्धतम साधन – अर्थात् अहिंसा – का आश्रय ले।

ह., २४-११-'३३

मार्च ७

यदि सत्यका पालन गुलाबकी कोमल सेज होता, यदि सत्यके लिए मनुष्यको कोई कीमत नहीं चुकानी पड़ती और यदि वह सुखमय और आनन्दमय ही होता, तो उसके पालनमें कोई सौंदर्य नहीं रह जाता। यदि हम पर आसमान टूट पड़े, तो भी हमें सत्य पर डटे रहना चाहिये।

यं. इं., २७-९-'२८

मार्च ८

केवल सत्य ही असत्यका शमन करता है, प्रेम ही क्रोधका शमन करता है और कष्ट-सहन ही हिंसाका शमन करता है। यह शाश्वत सनातन नियम केवल सन्तोंके लिए ही नहीं है, परन्तु सब मनुष्योंके लिए है। इसका पालन करनेवाले भले ही थोड़े लोग कल हों, परन्तु वे पृथ्वीके रत्न हैं। वे ही समाजको एक सूत्रमें बाँधते हैं, उसे संगठित रखते हैं; ऐसे लोग नहीं जो विवेक-बुद्धि और सत्यके विरुद्ध पाप करते हैं।

ह., १-२-'४२

मार्च ९

अमूर्त सत्यका तब तक कोई मूल्य नहीं है जब तक वह ऐसे मानवोंमें मूर्तरूप ग्रहण नहीं करता, जो उसके लिए प्राणार्पण करने तककी तैयारीका प्रमाण देकर उसका प्रतिनिधित्व करते हैं। हमारे दोष इसलिए जीवित रहते हैं कि हम अपने आदर्शोंके जीवित प्रतिनिधि होनेका महज ढोंग करते हैं। सौंपे हुए कर्तव्यको पूरा करनेमें कष्टसहनके लिए तैयार रह कर ही हम अपना सत्य-पालनका दावा सिद्ध कर सकते हैं।

यं. इं., २२-१२-'२१

मार्च १०

सत्यके उपासकको सदा विश्वास रखना चाहिये, यद्यपि उसके जीवनमें विश्वास न रखनेकी, अपनी बात पर शंका रखनेकी, भी उतनी ही जरूरत होती है। सत्यकी उसकी भक्ति उससे पूर्णतम विश्वास रखनेका तकाजा करती है। मानव-स्वभावका जो ज्ञान उसे है उससे सत्यभक्तको नम्र बनना चाहिये और इसलिए अपनी भूलका पता चलते ही उसे सुधारनेके लिए सत्यभक्तको सदा तत्पर रहना चाहिये।

यं. इं., ६-५-'२६

मार्च ११

सीमित (शक्तिवाले) मानव सत्य और प्रेमको उनके समग्र रूपमें कभी नहीं जान पायेंगे, क्योंकि ये अपने आपमें अनन्त और असीम हैं। परन्तु अपने मार्गदर्शनके लिए हम इन्हें पर्याप्त मात्रामें जानते हैं। इनका प्रयोग करनेमें हम गलतियाँ करेंगे; और कभी कभी तो भयंकर गलतियाँ करेंगे। परन्तु मनुष्य स्व-शासन करनेवाला प्राणी है; और स्व-शासनमें जैसे बार बार गलतियाँ करनेकी सत्ताका समावेश होता है, वैसे ही गलतियाँ सुधारनेकी सत्ताका भी जरूरी तौर पर समावेश होता है।

यं. इं., २१-४-'२७

मार्च १२

मेरा यह विश्वास है कि बड़ीसे बड़ी सावधानीके बावजूद यदि मनुष्यसे गलतियाँ हो जायँ, तो उन गलतियोंसे संसारको सचमुच कोई हानि नहीं होती, और न किसी व्यक्तिको हानि पहुँचती है। जो मनुष्य ईश्वरसे डरते हैं उनकी जान-बूझकर न की गई गलतियोंके परिणामोंसे ईश्वर हमेशा संसारको बचा लेता है।

यं. इं., ३-१-'२९

मार्च १३

गलती करना, भयंकर गलती करना भी, मनुष्यके लिए स्वाभाविक है। परन्तु वह स्वाभाविक तभी है जब उस गलतीको सुधारने और उसे दुबारा न करनेका हमारा दृढ़ संकल्प हो। यदि किये हुए संकल्पका पूर्ण रूपसे पालन किया जाय, तो उस गलतीको दुनिया भूल जायगी।

ह., ६-२-'३७

मार्च १४

अनिवार्यको अनिच्छासे स्वीकार करने पर ईश्वर प्रसन्न नहीं होता। वह तो पूर्ण हृदय-परिवर्तनसे ही प्रसन्न होता है।

यं. इं., २-२-'२२

मार्च १५

इस दुनियामें निर्दोष कोई नहीं है – यहाँ तक कि ईश्वरके भक्त भी निर्दोष नहीं हैं। वे ईश्वरके भक्त इसलिए नहीं हैं कि वे निर्दोष हैं, बल्कि इसलिए हैं कि वे अपने दोषोंको जानते हैं, दोषोंसे बचनेका प्रयत्न करते हैं, अपने दोषोंको कभी छिपाते नहीं और सदा अपने आपको सुधारनेके लिए तैयार रहते हैं।

ह., २८-१-'३९

मार्च १६

गलतीका इकरार उस झाड़ूके समान है, जो कूड़े-कचरेको बुहार कर हटा देती है और जमीनकी सतहको पहलेसे ज्यादा साफ-सुथरी बना देती है।

यं. इं., १६-२-'२२

मार्च १७

सत्य केवल इसलिए सत्य नहीं है कि वह प्राचीन है। और न आवश्यक रूपमें उसके बारेमें इसलिए शंका रखनी चाहिये कि वह प्राचीन है। जीवनके कुछ ऐसे बुनियादी तत्त्व होते हैं, जिन्हें गंभीर विचार किये बिना सिर्फ इसलिए नहीं छोड़ा जा सकता कि जीवनमें उन पर अमल करना कठिन होता है।

ह., १४-३-'३६

मार्च १८

बुद्धिवादी लोग प्रशंसाके पात्र हैं। परन्तु बुद्धिवाद जब अपने लिए सर्व-शक्तिमान होनेका दावा करता है, तब वह भयंकर राक्षस बन जाता है। बुद्धि पर सर्व-शक्तिमत्ताके गुणका आरोपण करना उतनी ही बुरी मूर्तिपूजा है, जितनी जड़ पदार्थको ईश्वर मानकर उसकी पूजा करना।

यं. इं., १४-१०-'२६

मार्च १९

परिवर्तन प्रगतिकी एक शर्त है। जब मन किसी चीजको गलत मानकर उसके खिलाफ विद्रोह करता है, तब कोई ईमानदार आदमी यांत्रिक सुसंगतताका पालन नहीं कर सकता।

यं. इं., १९-१२-'२९

मार्च २०

मैं सुसंगतताके पालनको हौवा नहीं बना लेता। यदि मैं प्रत्येक क्षण अपने प्रति सच्चा और ईमानदार रहूँ, तो मैं अपने सामने दोषके रूपमें रखी जानेवाली अपनी असंगतताओंकी जरा भी परवाह नहीं करूँगा।

ह., ९-११-'३४

मार्च २१

एक सुसंगतता ऐसी है जो बुद्धिमत्तापूर्ण होती है; और दूसरी सुसंगतता ऐसी है जो मूर्खतापूर्ण होती है। जो मनुष्य सुसंगत बननेके लिए भारतकी कड़ी धूपमें और नारवेकी कड़ाकेकी सरदीमें खुले शरीर जायगा, वह मूर्ख माना जायगा; साथ ही उसे प्राणोंसे भी हाथ धोने पड़ेंगे।

यं. इं., ४-४-'२९

मार्च २२

मानव-जीवन समझौतोंकी एक दीर्घ परम्परा है; और जिस बातको हमने सिद्धान्तके रूपमें सत्य पाया है, उसे व्यवहारमें सिद्ध करना हमेशा आसान नहीं होता।

ह., १८-११-'३९

मार्च २३

कुछ सिद्धान्त ऐसे शाश्वत और सनातन होते हैं, जिनमें समझौतेके लिए कोई अवकाश ही नहीं होता; और ऐसे सिद्धान्तों पर अमल करनेके लिए मनुष्यको प्राणोंका बलिदान देनेके लिए भी तैयार रहना चाहिये।

ह., ५-९-'३६

मार्च २४

मेरे विचारसे 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यं अप्रियम्।' संस्कृतके इस वचनका अर्थ यही है कि मनुष्यको सत्य बात भी नम्र भाषामें कहनी चाहिये। यदि हम नम्र भाषामें सत्य बात न कह सकें, तो अधिक अच्छा यही होगा कि हम ऐसी बात न कहें। इसका अर्थ यह हुआ कि जो मनुष्य अपनी वाणी पर नियंत्रण नहीं रख सकता, उसमें सत्य हो ही नहीं सकता।

यं. इं., १७-९-'२५

मार्च २५

प्रकृतिने हमें ऐसा बनाया है कि हम अपनी पीठ नहीं देख पाते; दूसरे लोग ही हमारी पीठको देख सकते हैं। इसलिए वे जो कुछ देखते हैं उससे लाभ उठाना हमारे लिए बुद्धिमानीकी बात होगी।

दि. डा., पृ. २२४

मार्च २६

सत्यकी शोध सच्ची भक्ति है। वह ऐसा मार्ग है, जो हमें ईश्वरके समीप ले जाता है। और इसलिए उसमें कायरताके लिए, पराजयके लिए कोई स्थान ही नहीं होता। वह एक ऐसा तावीज है, जिसके द्वारा स्वयं मृत्यु शाश्वत जीवनका प्रवेश-द्वार बन जाती है ।

य. मं., प्रक. १

मार्च २७

शुद्ध सत्यकी दृष्टिसे यह शरीर भी एक परिग्रह है। यह सत्य ही कहा गया है कि भोगोंकी वासना आत्माके लिए शरीरोंको जन्म देती है। जब इस वासनाका लोप हो जाता है तब शरीरकी और अधिक जरूरत नहीं रह जाती; और मनुष्य जन्म तथा मृत्युके दुश्चक्रसे मुक्त हो जाता है।

य. मं. प्रक. ६

मार्च २८

कितना सुन्दर हो, यदि हम सब, स्त्री-पुरुष, जाग्रत अवस्थामें की जानेवाली अपनी समस्त क्रियाओंमें – चाहे हम काम करते हों, खाते हों, पीते हों या खेलते हों – अपने आपको तब तक पूर्णतया सत्यकी उपासनामें लगाये रखें, जब तक हमारे शरीरका क्षय हमें सत्यके साथ एकरूप नहीं बना देता।

य. मं., प्रक. १

मार्च २९

जहाँ सत्य नहीं है वहाँ सच्चा ज्ञान नहीं हो सकता। इसीलिए चित् अथवा ज्ञान शब्द ईश्वरके साथ जोड़ा जाता है। और जहाँ सच्चा ज्ञान है वहाँ सदा आनन्दका वास रहता है। दुःख या शोकके लिए वहाँ कोई स्थान नहीं होता। और जैसे सत्य शाश्वत है वैसे ही उससे उत्पन्न आनन्द भी शाश्वत है। इसीलिए हम ईश्वरको सत्-चित्-आनन्दके रूपमें मानते हैं।

यं. इं., ३०-७-'३१

मार्च ३०

मौन सत्यके शोधकके लिए बड़ा सहायक होता है। मौनकी स्थितिमें आत्मा अपना मार्ग अधिक स्पष्ट रूपसे देख पाती है और जो समझमें नहीं आता या कुछ भ्रममें डालनेवाला होता है वह स्फटिकके समान स्पष्ट हो जाता है। हमारा जीवन सत्यकी एक

लम्बी और कठिन शोध है; और आत्मा अपनी सम्पूर्ण उच्चताको प्राप्त कर सके, इसके लिए उसे आंतरिक शांतिकी आवश्यकता होती है।

ह., १०-१२-'३८

मार्च ३१

अनुभवने मुझे सिखाया है कि सत्यके पुजारीको मौनका सेवन करना चाहिये। जाने-अनजाने भी मनुष्य बहुत बार अतिशयोक्ति करता है, अथवा जो कहने लायक हो उसे छिपाता है, अथवा उसे बदलकर कहता है। ऐसे संकटोंसे बचनेके लिए भी सत्यके पुजारीका अल्पभाषी होना जरूरी है। कम बोलनेवाला मनुष्य कभी बिना सोचे-विचारे नहीं बोलेगा; वह अपना प्रत्येक शब्द तौलकर बोलेगा।

आ. क., पृ. ५९

अप्रैल १

दुनियाके समस्त धर्म उसी एक बिन्दु पर पहुँचनेवाले अलग अलग मार्ग हैं। जब तक हम एक ही लक्ष्य पर पहुँचते हों तब तक यदि हम अलग अलग मार्ग ग्रहण करें तो उसकी क्या चिन्ता है?

हिं. स्व., पृ. ६५

अप्रैल २

एक ईश्वरमें विश्वास हर धर्मका मूल आधार है। लेकिन मैं भविष्यमें ऐसे किसी समयकी कल्पना नहीं करता, जब इस धरती पर व्यवहारमें केवल एक ही धर्म रहेगा। सिद्धान्तकी दृष्टिसे चूंकि ईश्वर एक है, इसलिए धर्म भी एक ही हो सकता है। परन्तु व्यवहारमें ऐसे कोई दो मनुष्य मेरे जाननेमें नहीं आये, जो ईश्वरके विषयमें एकसी ही कल्पना करते हों। इसलिए मनुष्योंके विभिन्न स्वभावों तथा विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियोंकी जरूरतें पूरी करनेके लिए शायद धर्म भी सदा भिन्न ही रहेंगे।

ह., २-२-'३४

अप्रैल ३

मैं जगतके समस्त महान धर्मोंके मूलभूत सत्यमें विश्वास रखता हूँ। मेरा यह विश्वास है कि वे सब ईश्वर-प्रदत्त हैं और मेरा यह भी विश्वास है कि वे धर्म उन प्रजाओंके लिए आवश्यक थे, जिनके बीचमें उनका प्रकटीकरण हुआ था। मैं मानता हूँ कि अगर हम सब विभिन्न धर्मोंके धर्मग्रन्थोंको उन धर्मोंके अनुयायियोंके दृष्टिकोणसे पढ़ सकें, तो हमें पता चलेगा कि बुनियादमें वे सब एक हैं और सब एक-दूसरेके सहायक हैं।

ह., १६-२-'३४

अप्रैल ४

मेरा यह विश्वास है कि दुनियाके समस्त महान धर्म लगभग सच्चे हैं। 'लगभग' मैं इसलिए कहता हूँ कि मेरा ऐसा विश्वास है कि मनुष्यका हाथ जिस किसी वस्तुको छूता है वह अपूर्ण हो जाती है; इसका कारण यह सत्य है कि मनुष्य स्वयं अपूर्ण है।

यं. इं., २२-९-'२७

अप्रैल ५

पूर्णता एकमात्र ईश्वरका गुण है। और वह गुण अवर्णनीय है, शब्दोंमें उसे समझाया नहीं जा सकता। मेरा यह विश्वास अवश्य है कि प्रत्येक मानवके लिए ईश्वरके समान पूर्ण बनना संभव है। उस पूर्णताकी आकांक्षा रखना हम सबके लिए आवश्यक है। परन्तु जब वह दिव्य आनन्दमय स्थिति प्राप्त होती है, तब उसका वर्णन करना और उसकी व्याख्या करना असंभव होता है।

यं. इं., २२-९-'२७

अप्रैल ६

यदि हमें सत्यका पूर्ण दर्शन हो जाय तो फिर हम केवल सत्यशोधक नहीं रहेंगे, बल्कि ईश्वरके साथ एकरूप हो जायेंगे, क्योंकि सत्य ही ईश्वर है। परन्तु केवल शोधक होनेके कारण हम अपनी शोधको आगे बढ़ाते हैं और अपनी अपूर्णताका हमें भान रहता है। और यदि हम स्वयं अपूर्ण हों, तो हमारे द्वारा कल्पित धर्म भी अपूर्ण ही होना चाहिये।

य. मं., प्रक. १०

अप्रैल ७

जिस प्रकार हमने ईश्वरका साक्षात्कार नहीं किया है, उसी प्रकार हमने धर्मका भी उसके पूर्ण रूपमें साक्षात्कार नहीं किया है। हमारी कल्पनाका धर्म इस प्रकार अपूर्ण है, इसलिए वह सदा विकासकी प्रक्रियाके अधीन रहेगा और बार बार उसका नया अर्थ किया

जायगा। केवल ऐसे विकासके कारण ही सत्यकी ओर, ईश्वरकी ओर, प्रगति करना हमारे लिए संभव है। और यदि मनुष्यों द्वारा योजित सारे धर्म अपूर्ण हों, तब तो यह प्रश्न ही नहीं उठता कि उनमें से कौनसा अधिक अच्छा है और कौनसा कम अच्छा है।

य. मं., प्रक. १०

अप्रैल ८

सारे धर्म सत्यको प्रकट करते हैं, परन्तु सभी अपूर्ण हैं और सबमें दोष हो सकते हैं। दूसरे धर्मोंके प्रति आदर-भाव रखनेका यह मतलब नहीं कि हम उनके दोषोंके प्रति ध्यान न दें। हमें अपने धर्मके दोषोंके प्रति भी अत्यन्त जाग्रत रहना चाहिये। परन्तु दोषोंके कारण उसका त्याग नहीं करना चाहिये, बल्कि उन दोषोंको मिटानेका प्रयत्न करना चाहिये। सब धर्मोंके प्रति समभावसे देखने पर हम दूसरे धर्मोंके प्रत्येक स्वीकार करने योग्य तत्त्वका अपने धर्ममें समन्वय करनेमें कभी संकोच नहीं रखेंगे, बल्कि ऐसा करना अपना धर्म समझेंगे।

य. मं., प्रक. १०

अप्रैल ९

जिस प्रकार किसी वृक्षका तना एक होता है, परन्तु शाखायें और पत्ते अनेक होते हैं; उसी प्रकार सच्चा और पूर्ण धर्म तो एक ही है, परन्तु जब वह मानवके माध्यमसे व्यक्त होता है तब अनेक रूप ग्रहण कर लेता है।

य. मं., प्रक. १०

अप्रैल १०

प्रार्थनापूर्ण शोध और अध्ययनके आधार पर तथा यथासंभव अधिकसे अधिक लोगोंके साथ चर्चा करनेके बाद मैं आजसे बहुत पहले इस निर्णय पर पहुँच चुका था कि संसारके सभी धर्म सच्चे हैं और उन सबमें कुछ दोष भी है; और अपने धर्मका दृढ़तासे पालन करते हुए मुझे दूसरे सब धर्मोंको हिन्दू धर्मके समान ही प्रिय समझना चाहिये ।

इससे उचित रूपमें ही यह निष्कर्ष भी निकलता है कि सब मनुष्योंको हमें अपने निकटतम स्वजनोंकी तरह ही प्रिय मानना चाहिये और उनके बीच हमें कोई भेद नहीं करना चाहिये।

यं. इं., १९-१-'२८

अप्रैल ११

ईश्वरका दिया हुआ एक धर्म अगम्य है - वाणीसे परे है। अपूर्ण मानव उसे अपनी अपनी भाषामें रखते हैं और उनके शब्दोंका अर्थ दूसरे मनुष्य करते हैं, जो स्वयं उतने ही अपूर्ण हैं। ऐसी स्थितिमें किसके अर्थको सही माना जाय? प्रत्येक मानव अपने दृष्टिकोणसे सच्चा है, परन्तु यह असंभव नहीं कि प्रत्येक मानव गलत हो। इसीलिए सहिष्णुताकी जरूरत पैदा होती है। इस सहिष्णुताका अर्थ यह नहीं कि हम अपने धर्मकी उपेक्षा करें, परन्तु यह है कि अपने धर्मके प्रति हम अधिक ज्ञानमय, अधिक सात्त्विक और अधिक निर्मल प्रेम रखें।

य. मं., प्रक. १०

अप्रैल १२

सहिष्णुता हमें आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि प्रदान करती है, जो धर्मान्धतासे उतनी ही दूर है जितना उत्तरी ध्रुवसे दक्षिणी ध्रुव । धर्मका सच्चा ज्ञान एक धर्म और दूसरे धर्मके बीचकी दीवालोंको तोड़ देता है।

य. मं., प्रक. १०

अप्रैल १३

सहिष्णुताके लिए यह जरूरी नहीं है कि जिस चीजको मैं सहन करता हूँ उसका मैं समर्थन भी करूँ। मद्यपान, मांसाहार और धूम्रपानको मैं बिलकुल पसन्द नहीं करता; लेकिन मैं हिन्दुओं, मुसलमानों और ईसाइयोंमें इन बुराइयोंको सहन करता हूँ - जिस प्रकार मैं इन चीजोंके अपने त्यागको सहन करनेकी उनसे आशा रखता हूँ, भले ही वे मेरे इस त्यागको नापसन्द करें।

यं. इं., २५-२-'२०

अप्रैल १४

जो धर्म व्यावहारिक बातोंका विचार नहीं करता और उनकी समस्याओंको हल करनेमें सहायक नहीं बनता, वह धर्म ही नहीं है।

यं. इं., ७-५- २५

अप्रैल १५

मैं मानवोचित आचरणसे अलग किसी धर्मको नहीं जानता। धर्म दूसरी सब प्रवृत्तियोंको नैतिक आधार प्रदान करता है, जो अन्य किसी प्रकारसे उन्हें प्राप्त नहीं होता। और जिन मानव-प्रवृत्तियोंके पीछे कोई नैतिक आधार नहीं होता, वे जीवनको 'निरर्थक शोर-गुल और तीव्र भाग-दौड़' की भूल-भुलैया बना देती हैं।

ह., २४-१२-'३८

अप्रैल १६

मेरी दृष्टिमें धर्मसे कोई सम्बन्ध न रखनेवाली राजनीति बिलकुल कूड़ा-करकट जैसी है, जिससे हमें सदा दूर ही रहना चाहिये। राजनीतिका सम्बन्ध राष्ट्रोंसे होता है; और जिसका सम्बन्ध राष्ट्रोंके कल्याणके साथ होता है, वह धर्मनिष्ठ मनुष्यके जीवनका - दूसरे शब्दोंमें ईश्वर और सत्यकी शोध करनेवाले मनुष्यके जीवनका एक विषय होना ही चाहिये।

यं. इं., १८-६-'२५

अप्रैल १७

मेरी दृष्टिमें ईश्वर और सत्य एक-दूसरेका स्थान ले सकनेवाले शब्द हैं। और यदि कोई मुझसे कहे कि ईश्वर असत्यका देवता है अथवा त्रासका देवता है, तो मैं उसकी पूजा करनेसे इनकार कर दूँगा। इसलिए राजनीतिमें भी हमें दैवी राज्यकी स्थापना करनी होगी।

यं. इं., १८-६-'२५

अप्रैल १८

एक अच्छे हिन्दू या अच्छे मुसलमानको अपने देशका प्रेमी होनेके कारण अधिक अच्छा हिन्दू अथवा अधिक अच्छा मुसलमान होना चाहिये। हमारे देशके सच्चे हित और हमारे धर्मके सच्चे हितके बीच कभी कोई संघर्ष हो ही नहीं सकता। जहाँ ऐसा कोई संघर्ष दिखाई देता है, वहाँ हमारे धर्ममें अर्थात् हमारी नीतिमें कोई दोष होना चाहिये। सच्चे धर्मका अर्थ है अच्छे विचार और अच्छा आचरण। सच्चे देशप्रेमका अर्थ भी अच्छे विचार और अच्छा आचरण होता है। दो समानार्थक वस्तुओंके बीच तुलना करना गलत है।

यं. इं., ९-१-'३०

अप्रैल १९

मानव-परिवारके हम सब सदस्य तत्त्वज्ञानी नहीं हैं। हम धरतीके प्राणी हैं। हम अदृश्य ईश्वरका ध्यान धर कर सन्तुष्ट नहीं होते। किसी न किसी प्रकार हम ऐसी कोई वस्तु चाहते हैं, जिसे हम छू सकें, जिसे हम देख सकें और जिसके सामने हम घुटनोंके बल नम्रभावसे झुक सकें। फिर भले वह कोई ग्रंथ हो, या पत्थरका खाली मकान हो, या अनेक मुर्तियोंसे भरा कोई पत्थरका मकान हो। कुछ लोगोंको ग्रंथसे संतोष हो जायगा, दूसरे कुछको खाली मकानसे सन्तोष होगा और दूसरे बहुतसे लोगोंको तब तक सन्तोष नहीं होगा जब तक वे इन खाली मकानोंमें किसी मूर्तिको स्थापित हुई नहीं देखते।

ह., २३-१-'३७

अप्रैल २०

मन्दिरोंमें जानेसे हमें कोई लाभ होता है या नहीं होता, यह हमारी मानसिक स्थिति पर निर्भर करता है। इन मंदिरोंमें हमें नम्रताकी और पश्चात्तापकी भावनासे जाना चाहिये। वे सब ईश्वरके निवास हैं। बेशक, ईश्वर हर मनुष्यमें रहता है, उसकी सृष्टिके हर परमाणुमें उसका वास है, इस पृथ्वीकी हर वस्तुमें उसका निवास है। परन्तु क्योंकि हम अत्यंत प्रमादी

मानव इस सत्यको नहीं समझते कि ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है, इसलिए हम मंदिरों पर विशिष्ट पवित्रताका आरोपण करते हैं और मानते हैं कि ईश्वर उन मंदिरोंमें रहता है।

ह., २३-१-'३७

अप्रैल २१

जब हम इन मंदिरोंमें जायँ तब हमें अपने शरीर, अपने मन और अपने हृदय स्वच्छ और शुद्ध कर लेने चाहिये। हमें प्रार्थनामय वृत्तिसे मंदिरोंमें प्रवेश करना चाहिये; और ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिये कि वह वहाँ आनेके फलस्वरूप हमें अधिक पवित्र पुरुष और अधिक पवित्र स्त्री बनावे। और यदि आप इस बूढ़े आदमीकी सलाह मानें, तो मैं कहूँगा कि आपने जो शारीरिक मुक्ति – अस्पृश्यतासे मुक्ति - प्राप्त की है, वह आत्माकी मुक्ति सिद्ध होगी।

ह., २३-१-'३७

अप्रैल २२

कड़वे अनुभवने मुझे यह सिखाया है कि सारे मन्दिर ईश्वरके निवास नहीं होते। वे शैतानके निवास भी हो सकते हैं। पूजाके ये स्थान तब तक कोई मूल्य नहीं रखते जब तक उनका पुजारी ईश्वरका भक्त न हो। मन्दिर, मसजिद और गिरजाघर वैसे ही होते हैं जैसे मनुष्य उन्हें बनाता है।

यं. इं., १९-५-'२७

अप्रैल २३

यदि किसीको भगवानकी असीम दयामें शंका हो, तो वह इन तीर्थस्थानोंको देखे। वह महायोगी इन पवित्र स्थानोंमें अपने नाम पर चलनेवाला कितना ढोंग, अधर्म और पाखंड सहन करता है?

आ. क., पृ. २२२

अप्रैल २४

जब हम विशाल नीले आकाशके नीचे निरन्तर नया रूप लेनेवाले उस मन्दिरको देखते हैं, जो धर्मके नाम पर झगड़ कर ईश्वरके नामका दुरुपयोग करनेके बजाय ईश्वरकी सच्ची पूजाके लिए हमें आमंत्रण देता है, तो इतने ढोंग और पाखंडको आश्रय देनेवाले तथा गरीबसे गरीबको अपने भीतर प्रवेश न करने देनेवाले ये गिरजाघर, मसजिद और मन्दिर ईश्वरका और उसकी पूजाका केवल मजाक उड़ानेवाले स्थल मालूम होते हैं।

ह., ५-३-'४२

अप्रैल २५

अस्पृश्यता हिन्दू धर्मको उसी प्रकार विषैला बनाती है, जिस प्रकार जहरका एक बूँद दूधको विषैला बना देता है।

यं. इं. २०-१२-'२७

अप्रैल २६

आजके हिन्दू धर्मको कलंक लगानेवाला यह 'मुझे-न-छूओ'-वाद एक प्रकारका रोग है। वह केवल मनकी जड़ताको और अंधे मिथ्याभिमानको ही प्रकट करता है। धर्मकी भावना और नीतिमत्ताके साथ उसका बिलकुल मेल नहीं बैठता।

ह., २०-४-'३४

अप्रैल २७

मेरे विचारसे अस्पृश्यता हमारे जीवनको लगा हुआ एक अभिशाप है। और जब तक वह अभिशाप हमारे साथ रहता है तब तक मेरे खयालसे हमें यही मानना पड़ेगा कि इस पवित्र भूमि पर जो भी दुःख हम भोगते हैं, वह हमारे इस घोर और कभी न मिट सकनेवाले अपराधका उचित और उपयुक्त दंड ही है।

स्पी, रा, म., पृ० ३८७

अप्रैल २८

क्या इस बातको देखनेकी दृष्टि हममें नहीं आयेगी कि अपने छठे भागको (या जो भी संख्या हो) दबाकर हमने अपने आपको दबा दिया है, नीचे गिरा दिया है? कोई मनुष्य दूसरेको खड्डेमें नीचे तब तक नहीं ले जा सकता, जब तक वह स्वयं खड्डेमें नहीं उतरता और ऐसा करके पापका भागी नहीं बनता। दबे हुए लोग पाप नहीं करते। पापी तो दबानेवाला है, जिसे अपने उस अपराधका उत्तर देना होगा, जो वह उन लोगोंके प्रति करता है जिन्हें वह दबाता है।

यं. इं., २९-३-'२८

अप्रैल २९

ईश्वर सीधी सजा नहीं देता। उसके तरीके गूढ़ होते हैं। कौन जानता है कि हमारे सारे दुःख-दर्द और मुसीबतें इस एक काले पापके कारण नहीं हैं?

यं. इं., २९-५-'२४

अप्रैल ३०

स्वराज्य बिलकुल निरर्थक शब्द है, यदि हम भारतके पाँचवें भागके लोगोंको हमेशा गुलामीमें रखना चाहें और जान-बूझकर उन्हें राष्ट्रीय संस्कृतिके फलोंका उपभोग करनेसे वंचित रखें। आत्मशुद्धिके इस महान आन्दोलनमें हम ईश्वरकी सहायता चाहते हैं, परन्तु उसके प्राणियोंमें सबसे योग्य मनुष्योंको हम मानवताके अधिकारोंसे वंचित रखते हैं। स्वयं क्रूर और निर्दय होते हुए हम दूसरोंकी क्रूरतासे अपनेको मुक्त रखनेकी प्रार्थना भगवानके सिंहासनके सामने जाकर नहीं कर सकते।

यं. इं., २५-५-'२१

मई १

प्रार्थना प्रातःकालका आरम्भ है और संध्याका अन्त है।

यं. इं., २३-१-'३०

मई २

जिस प्रकार भोजन शरीरके लिए आवश्यक है, उसी प्रकार प्रार्थना आत्माके लिए आवश्यक है। मनुष्य भोजनके बिना तो कई दिनों तक जीवित रह सकता है – जैसे मैक्स्विनी ७० दिनसे अधिक जीवित रहा – परन्तु ईश्वरमें श्रद्धा रखनेवाला मनुष्य प्रार्थनाके बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता, उसे नहीं रहना चाहिये।

यं. इं., १५-१२-'२७

मई ३

प्रार्थनाके लिए वाणीकी जरूरत नहीं होती। वह स्वभावसे ही अद्भुत वस्तु है। इस बारेमें मुझे जरा भी शंका नहीं कि हार्दिक उपासना विकाररूपी मलको शुद्ध करनेके लिए रामबाण उपाय है। परन्तु इस प्रसादीके लिए हममें संपूर्ण नम्रता होनी चाहिये।

आ. क., पृ. ६९

मई ४

मैं आपके सामने कुछ मेरा अपना और अपने साथियोंका अनुभव रखता हूँ, जब मैं यह कहता हूँ कि जिसने प्रार्थनाके जादूका अनुभव किया है वह लगातार कई दिनों तक भोजनके बिना तो रह सकता है, परन्तु प्रार्थनाके बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता; क्योंकि प्रार्थनाके बिना आंतरिक शांति नहीं मिल सकती।

यं. इं., २३-१-'३०

मई ५

किसी पवित्र ध्येयमें कभी पराजय स्वीकार न कीजिये और आजसे यह दृढ़ निश्चय कर लीजिये कि आप शुद्ध और पवित्र रहेंगे और आपको ईश्वरकी ओरसे उत्तर मिलेगा –

ईश्वर आपकी प्रार्थना जरूर सुनेगा। परन्तु ईश्वर अहंकारीकी प्रार्थना कभी नहीं सुनता, न उन लोगोंकी प्रार्थना सुनता है, जो उसके साथ सौदा करते हैं।

यं. इं., ४-४-'२९

मई ६

मैं अपना सबूत दे सकता हूँ और कह सकता हूँ कि हार्दिक प्रार्थना निश्चित ही ऐसा सर्वोच्च शक्तिशाली साधन है, जिसकी सहायतासे मनुष्य अपनी कायरता पर और दूसरी पुरानी बुरी आदतों पर विजय पा सकता है। अपने भीतर विराजमान ईश्वरमें जीवित श्रद्धा हुए बिना प्रार्थना असंभव है।

यं. इं., २०-१२-'२८

मई ७

बड़ेसे बड़े अपवित्र या पापी मनुष्यकी प्रार्थना भी सुनी जायगी। यह बात मैं अपने व्यक्तिगत अनुभव परसे कहता हूँ। मैं इस आध्यात्मिक प्रायश्चित्तकी प्रक्रियामें से गुजर चुका हूँ। सबसे पहले ईश्वरके राज्यकी खोज करो; और बादमें हर चीज तुम्हें मिल जायगी।

यं. इं., ४-४-'२९

मई ८

जब तक हम अपने आपको शून्यवत् नहीं बना लेते, तब तक हम अपने भीतरकी बुराईको जीत नहीं सकते। एकमात्र प्राप्त करने योग्य सच्ची स्वतंत्रताके मूल्यके रूपमें ईश्वर मनुष्यसे सम्पूर्ण आत्म-समर्पणसे कम किसी वस्तुकी मांग नहीं करता। और जब मनुष्य इस तरह अपने आपको खो देता है, तो तुरन्त ही वह अपनेको ईश्वरके सब प्राणियोंकी सेवामें लगा हुआ पाता है। वह सेवा ही उसके जीवनका आनन्द और उसका मनोरंजन बन जाती है। वह बिलकुल नया आदमी बन जाता है और ईश्वरकी सृष्टिकी सेवामें अपने आपको खपानेमें कभी थकान महसूस नहीं करता।

यं. इं., २०-१२-'२८

मई ९

हमारी प्रार्थना आत्म-निरीक्षणकी क्रिया है। वह हमें इस बातकी याद दिलाती है कि ईश्वरकी सहायता, उसके सहारेके बिना हम लाचार और निराधार हैं। हमारा कोई भी प्रयत्न प्रार्थनाके बिना – इस वस्तुको निश्चित रूपसे स्वीकार किये बिना पूरा नहीं होता कि मानवके उत्तम प्रयत्नका भी तब तक कोई फल नहीं आता जब तक उसके पीछे भगवानका आशीर्वाद न हो। प्रार्थना नम्रताकी पुकार है; वह आत्मशुद्धिकी, आन्तरिक निरीक्षणकी पुकार है।

ह., ८-६-'३५

मई १०

व्यक्तिकी योग्यता और क्षमताकी मर्यादायें होती हैं। जिस क्षण वह ऐसा विश्वास करने लगता है कि मैं सारे कार्य हाथमें ले सकता हूँ, उसी क्षण भगवान उसके इस अभिमानको मिटा देता है।

यं. इं., १२-३-'३१

मई ११

मनुष्य स्वभावसे गलती करनेवाला प्राणी है। वह निश्चित रूपसे यह कभी नहीं कह सकता कि उसके कदम सही दिशामें ही उठ रहे हैं। जिसे वह अपनी प्रार्थनाका उत्तर समझता है, वह उसके अहंकारकी प्रतिध्वनि भी हो सकती है। अचूक मार्गदर्शनके लिए मनुष्यके पास ऐसा पूर्ण निर्दोष हृदय होना चाहिये, जो कभी पाप कर ही नहीं सकता।

यं. इं., २५-९-'२४

मई १२

प्रत्येक मनुष्य प्रयत्न करे और अपने अनुभवसे देखे कि दैनिक प्रार्थनाके फलस्वरूप वह अपने जीवनमें कुछ नया जोड़ता है - कोई ऐसी वस्तु जोड़ता है, जिसके साथ दुनियाकी किसी भी वस्तुकी तुलना नहीं की जा सकती।

यं. इं., २४-९-'३१

मई १३

कुछ ऐसे विषय भी होते हैं, जिनमें हमारी बुद्धि हमें बहुत दूर तक नहीं ले जा सकती; और हमें उनसे सम्बन्ध रखनेवाली बातोंको श्रद्धासे स्वीकार कर लेना पड़ता है। उस स्थितिमें श्रद्धा बुद्धिका विरोध नहीं करती, परन्तु उससे ऊँची उठ जाती है। श्रद्धा एक प्रकारकी छठी इन्द्रिय है; वह ऐसे विषयोंमें काम करती है, जो बुद्धिकी सीमासे बाहर होते हैं।

ह., ६-३-'३७

मई १४

श्रद्धाके अभावमें यह विश्व एक क्षणमें नष्ट हो जायगा। सच्ची श्रद्धाका अर्थ है ऐसे लोगोंके ज्ञानपूर्ण अनुभवका उपयोग करना, जिनके बारेमें हमारा यह विश्वास है कि उन्होंने प्रार्थना और तपस्यासे शुद्ध और पवित्र बना हुआ जीवन बिताया है। इसलिए ऐसे पैगम्बरों या अवतारोंमें, जो अति प्राचीन कालमें हो गये हैं, विश्वास रखनेका अर्थ निरर्थक अन्धविश्वास नहीं है, परन्तु एक गहनतम आध्यात्मिक अभिलाषाकी तृप्ति है।

यं. इं., १४-४-'२७

मई १५

बिना श्रद्धावाला मनुष्य महासागरसे बाहर फेंके हुए बिन्दुके समान है, जो निश्चित रूपसे नष्ट होनेवाला है। महासागरके भीतरका हर बिन्दु महासागरकी भव्यताका सहभागी होता है और हमें जीवनप्रद प्राणवायु देनेका गौरव प्राप्त करता है।

ह., २५-४-'३६

मई १६

श्रद्धा हृदयका कार्य है। बुद्धिकी सहायतासे उसे शक्तिशाली बनाना चाहिये। जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं, श्रद्धा और बुद्धि एक-दूसरेकी विरोधिनी नहीं हैं। मनुष्यकी श्रद्धा

जितनी अधिक तीव्र होती है, उतनी ही अधिक वह मनुष्यकी बुद्धिको पैनी और प्रखर बनाती है। जब श्रद्धा अन्धी हो जाती है तब वह मर जाती है।

ह., ६-४-'४०

मई १७

श्रद्धा ही हमें सुरक्षित रूपमें तूफानी समुद्रोंके पार ले जाती है, श्रद्धा ही पर्वतोंको हिला देती है और श्रद्धा ही महासागरको कूद कर पार कर जाती है। वह श्रद्धा हमारे भीतर बसे हुए ईश्वरके जीवित और पूर्णतया जाग्रत भानके सिवा और कुछ नहीं है। जिसने वह श्रद्धा प्राप्त कर ली है, उसे और कुछ नहीं चाहिये। शरीरसे रोगग्रस्त होते हुए भी आध्यात्मिक दृष्टिसे वह पूर्ण स्वस्थ है, भौतिक दृष्टिसे गरीब होते हुए भी आध्यात्मिक समृद्धिसे उसका भंडार भरा रहता है।

यं. इं., २४-९-'२५

मई १८

मैं तो श्रद्धालु मनुष्य हूँ। मेरा आधार केवल उस ईश्वर पर है। मेरे लिए एक कदम काफी है। अगला कदम, जब उसका समय आयेगा, ईश्वर मुझे स्पष्ट रूपमें बता देगा।

ह., २०-१०-'४०

मई १९

उस श्रद्धाका कोई मूल्य नहीं है, जो केवल सुखके समयमें ही पनपती है। सच्चा मूल्य तो उसी श्रद्धाका है, जो कड़ीसे कड़ी कसौटीके समय भी टिकी रहे। यदि आपकी श्रद्धा सारी दुनियाकी निन्दाके सामने भी अडिग खड़ी न रह सके, तो वह निरा दंभ और ढोंग है।

यं. इं., २४-४-'२९

मई २०

श्रद्धा ऐसा सुकुमार फूल नहीं है, जो हलकेसे हलके तूफानी मौसममें भी कुम्हला जाय। श्रद्धा तो हिमालय पर्वतके समान है, जो कभी डिग ही नहीं सकती। कैसा भी भयंकर तूफान हिमालय पर्वतको बुनियादसे हिला नहीं सकता।...मैं चाहता हूँ कि आपमें से प्रत्येक मनुष्य ईश्वर और धर्मके विषयमें वैसी ही अचल श्रद्धा अपने भीतर बढ़ावे।

ह., २६-१-'३४

मई २१

अगर हमारे भीतर श्रद्धा है, अगर हमारा हृदय प्रार्थनामय है, तो हम ईश्वरके सामने कोई प्रलोभन नहीं रखेंगे, उसके साथ कोई सौदा नहीं करेंगे। हमें अपनेको शून्यवत् बना लेना चाहिये।

यं. इं., २२-१२-'२८

मई २२

प्रत्येक भौतिक संकटके पीछे कोई ईश्वरीय हेतु होता है। यह बिलकुल संभव है कि आज जैसे विज्ञान हमें सूर्य-ग्रहण या चन्द्र-ग्रहणके बारेमें पहलेसे बता देता है, वैसे ही पूर्णताको पहुँचा हुआ विज्ञान हमें यह भी पहलेसे बता दे कि भूकंप कब होगा। वह मानव-मस्तिष्ककी एक और बड़ी विजय होगी। परन्तु ऐसी विजयें अमर्यादित रूपमें ही क्यों न बढ़ जायँ, वे हमारी आत्मशुद्धि नहीं कर सकतीं, जिसके बिना किसी भी वस्तुका कोई मूल्य नहीं है।

ह., ८-६-'३५

मई २३

हमारा इहलोकका यह जीवन कांचकी उन चूड़ियोंकी अपेक्षा अधिक जल्दी टूटनेवाला है, जो स्त्रियाँ पहनती हैं। आप कांचकी चूड़ियोंको हजारों वर्ष तक बिना टूटे रख सकते हैं, यदि आप उन्हें एक पेटीमें सुरक्षित रखें और उन्हें कभी न छुएँ। परन्तु यह पार्थिव

जीवन इतना अस्थायी और नाशवान है कि एक क्षणमें इस धरतीसे मिट सकता है। इसलिए जीवनके जितने भी दिन हमें मिले हैं, उन दिनोंमें हम ऊंच-नीचके भेदोंसे मुक्त हो जायूँ, अपने हृदयोंको शुद्ध बना लें और जब कोई भूकंप, कोई कुदरती संकट या साधारण क्रममें मृत्यु हमें इस संसारसे उठा ले, उस समय ईश्वरके सामने खड़े होकर अपने कामोंका हिंसाब देनेके लिए तैयार रहें।

ह., २-२-'३४

मई २४

मृत्यु, जो शाश्वत सत्य है, उसी प्रकार एक क्रान्ति है जिस प्रकार जन्म और उसके बादका जीवन एक धीमा और स्थिर विकास है। मनुष्यके विकासके लिए मृत्यु उतनी ही आवश्यक है जितना कि स्वयं जीवन।

यं. इं., २-२-'२२

मई २५

मृत्यु कोई राक्षसी नहीं है; वह हमारी सच्चीसे सच्ची मित्र है। वह हमें यातनाओं और पीड़ाओंसे मुक्त करती है। वह हमारी इच्छाके विरुद्ध हमारी मदद करती है। वह हमें सदा नये अवसर, नयी आशायें प्रदान करती है। वह मीठी नींदकी तरह हममें फिरसे नयी शक्ति और नये जीवनका संचार करती है।

यं. इं., २०-१२-'२६

मई २६

यह मेरे मनमें सूर्यके प्रकाशकी तरह स्पष्ट है कि जीवन और मरण उसी एक वस्तुके केवल दो पहलू हैं – एक ही सिक्केकी सीधी और उलटी बाजुएँ हैं। सचमुच संकट और मृत्यु मेरे सामने सुख या जीवनकी अपेक्षा कहीं अधिक समृद्ध और सम्पन्न पहलू पेश करते हैं। कड़ी कसौटियों, संकटों और दुःखोंके बिना, जो जीवनको स्वस्थ और प्राणवान बनाते हैं, जीवनका क्या मूल्य रह जाता है?

यं. इं., १२-३-'३०

मई २७

मेरा धर्म मुझे सिखाता है कि जब कभी जीवनमें ऐसा संकट आवे जिसे हम दूर न कर सकें, तब हमें उपवास और प्रार्थना करनी चाहिये।

यं. इं., २५-९-'२४

मई २८

उपवास और प्रार्थनाके समान शक्तिशाली वस्तु दुनियामें और कोई नहीं है। उनसे हमारे जीवनमें आवश्यक अनुशासन पैदा होता है, आत्मत्यागकी भावना बढ़ती है तथा नम्रता और संकल्पकी दृढ़ता उत्पन्न होती है, जिनके बिना हमारी सच्ची प्रगति नहीं हो सकती।

यं. इं., ३१-३-'२०

मई २९

उपवास सत्याग्रहके शस्त्रागारका एक अत्यन्त शक्तिशाली हथियार है। हरकोई उपवास नहीं कर सकता। उपवास करनेकी केवल शारीरिक शक्ति होना ही उपवासके लिए मनुष्यकी योग्यताकी कसौटी नहीं है। ईश्वरमें सजीव श्रद्धा न हो, तो उपवाससे कोई लाभ नहीं होता। उपवास न तो केवल यांत्रिक प्रयत्न बनना चाहिये और न निरा अनुकरण होना चाहिये। उसकी प्रेरणा हमारी आत्माकी गहराईमें से मिलनी चाहिये।

इं., १८-३-'३९

मई ३०

मनुष्य स्वास्थ्यके नियमोंके अनुसार स्वास्थ्य सुधारनेके लिए उपवास करता है। वह अपनेसे होनेवाले अन्यायके प्रायश्चित्तके रूपमें भी उपवास करता है, जब उसे अपने अन्यायकी प्रतीति हो जाती है। इन उपवासोंमें उपवासीका अहिंसामें श्रद्धा रखना जरूरी नहीं है। परन्तु एक ऐसा भी उपवास होता है, जिसे समाजके किसी अन्यायके खिलाफ करना कभी कभी अहिंसाके पुजारीका पवित्र कर्तव्य हो जाता है; और यह उपवास वह

तभी करता है, जब अहिंसाके पुजारीके नाते उसके सामने अन्यायको मिटानेका दूसरा कोई उपाय नहीं रह जाता।

दि. डा., पृ. ३३०

मई ३१

सम्पूर्ण उपवास सम्पूर्ण और सच्चा आत्मत्याग है। वह सच्चीसे सच्ची प्रार्थना है। 'प्रभो, मेरा जीवन तुझे ही समर्पित है; तू मेरे सम्पूर्ण जीवनको सदा केवल तेरे ही लिए रहने दे' – यह प्रार्थना केवल मौखिक अथवा आलंकारिक अभिव्यक्ति नहीं है, नहीं होनी चाहिये। यह आत्म-समर्पण परिणामकी चिन्तासे मुक्त, पूर्ण शुद्ध और आनन्दमय होना चाहिये। भोजनका और पानीका भी त्याग केवल इसका आरम्भ ही है – आत्म-समर्पणका छोटेसे छोटा अंश है।

ह., १३-४-'३३

जून १

यदि हम स्पष्ट रूपसे यह समझ लें कि हम जो कुछ कहते हैं और करते हैं, उसे सुनने और देखनेके लिए ईश्वर सदा साक्षीके रूपमें मौजूद रहता है, तो इस दुनियामें हमारे लिए किसीसे कुछ भी छिपानेको नहीं रह जायगा। क्योंकि जब हम अपने सरजनहार पिताके सामने मलिन विचार नहीं करेंगे, तब वाणी द्वारा उन्हें व्यक्त करनेकी तो बात ही कैसे उठ सकती है? मलिनता ही वह चीज है, जो गुप्तता और अंधकारको खोजती है।

यं. इं., २२-१२-'२०

जून २

मनुष्यका स्वभाव ही ऐसा है कि वह गंदगीको हमेशा छिपाता है। हम गंदी चीजोंको देखना या छूना नहीं चाहते। हम उन्हें अपनी दृष्टिसे दूर रखना चाहते हैं। यही बात हमारी वाणी पर भी लागू होनी चाहिये। मैं तो यह कहूँगा कि हमें ऐसे विचार भी मनमें नहीं लाने चाहिये, जिन्हें हम दूसरोंसे छिपाना चाहें।

यं. इं., २२-१२-'२०

जून ३

आप जो कुछ भी करें, उसमें अपने प्रति और दुनियाके प्रति सच्चे और प्रामाणिक रहें। अपने विचारोंको कभी न छिपायें। अगर अपने विचार प्रकट करनेमें आपको शरम मालूम हो, तो उन्हें मनमें लानेमें तो और भी अधिक शरम मालूम होनी चाहिये।

ह., २४-४-'३७

जून ४

सारे पाप छिपाकर ही किये जाते हैं। जिस क्षण हमें यह प्रतीति हो जायेगी कि ईश्वर हमारे विचारोंका भी साक्षी रहता है, उसी क्षण हम पापोंसे मुक्त हो जायेंगे।

ह., १७-१-'३९

जून ५

विचार पर नियंत्रण रखना एक लम्बी, दुःखद और कठिन परिश्रमकी प्रक्रिया है। लेकिन मेरा यह विश्वास है कि इस भव्य और सुन्दर परिणामको प्राप्त करनेके लिए खर्च किया जानेवाला कितना भी समय, उठाया जानेवाला कितना भी परिश्रम और भोगा जानेवाला कितना भी दुःख अधिक नहीं होगा। विचारकी शुद्धि निश्चित अनुभव जैसी दृढ़ ईश्वर-श्रद्धाके बिना कभी संभव ही नहीं है।

यं. इं., २५-८-'२७

जून ६

जब काम, क्रोध आदि आवेग तुम पर सवारी करनेकी धमकी दें, तब घुटनोंके बल झुककर ईश्वरकी शरणमें जाओ और उससे सहायताकी भीख माँगो। रामनाम मेरा अचूक सहायक है।

से. रे, से. इं., भा. २, पृ. ९

जून ७

पवित्र जीवनकी आकांक्षा रखनेवाला हर मनुष्य मेरी इस बात पर विश्वास रखे कि अपवित्र विचार अकसर उसी तरह शरीरको हानि पहुँचानेकी शक्ति रखता है, जिस तरह कि अपवित्र कार्य।

यं. इं., २५-८-'२७

जून ८

मुक्त किन्तु अमूर्त विचारकी शक्ति मूर्त अर्थात् कार्यरूपमें परिणत विचारकी शक्तिसे कहीं ज्यादा बड़ी होती है। और जब कार्य पर उचित अंकुश प्राप्त कर लिया जाता है तब विचार पर उसकी प्रतिक्रिया होती है और वह स्वयं विचारका नियमन करता है। इस प्रकार कार्यरूपमें परिणत विचार बन्दी बन जाता है और वशमें कर लिया जाता है।

यं. इं., २-९-'२६

जून ९

आपको विचार, वाणी और कार्यका सुमेल साधनेका ध्येय सदा अपने सामने रखना चाहिये। आप सदा अपने विचारोंको शुद्ध करनेका ध्येय रखिये; इससे सारी बातें ठीक हो जायेंगी। विचारसे अधिक बलवान कोई वस्तु दुनियामें नहीं है। कार्य वाणीके पीछे चलता है और वाणी विचारके पीछे चलती है। यह दुनिया शक्तिशाली विचारका ही परिणाम है। और जहाँ विचार बलवान तथा शुद्ध होता है, वहाँ परिणाम भी हमेशा बलवान और शुद्ध ही होता है।

ह., २४-४-'३७

जून १०

मनुष्य अकसर वैसा ही बन जाता है जैसा वह अपने आपको मानता है। अगर मैं अपने आपसे यह कहता रहूँ कि मैं अमुक काम नहीं कर सकता, तो यह संभव है कि अन्तमें सचमुच मैं वह काम करनेमें असमर्थ हो जाऊँ। इसके विपरीत, अगर मेरा यह विश्वास हो कि मैं उसे कर सकता हूँ, तो मैं अवश्य ही उसे करनेकी क्षमता प्राप्त कर लूँगा – भले आरंभमें वह क्षमता मुझमें न भी हो।

ह., १-९-'४०

जून ११

प्रार्थनाकी भावनासे ओतप्रोत कोई भी शुभ आशयवाला प्रयत्न कभी व्यर्थ नहीं जाता और मनुष्यकी सफलता केवल ऐसे प्रयत्नमें हीं निहित होती है। परिणाम अथवा फल तो ईश्वरके ही हाथोंमें रहता है।

यं. इं., १७-६-'३१

जून १२

'तू विश्वास रख, मुझमें भरोसा रखकर चलनेवाले मनुष्यका कभी नाश नहीं हो सकता' (न मे भक्त: प्रणश्यति), यह प्रभुका वचन है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं समझना चाहिये कि कोई प्रयत्न किये बिना केवल प्रभुमें विश्वास रखनेसे ही हमारे पाप धुल जायँगे। सान्त्वना और शांति केवल उसीको प्राप्त होगी, जो इन्द्रियोंके विषयोंके प्रलोभनोंके खिलाफ कठोर संघर्ष करता है और आँखोंमें आँसू लिये दुःखी तथा सन्तप्त मनसे प्रभुकी शरण लेता है।

यं. इं., १२-१-'२८

जून १३

यह कहना बहुत सरल है कि 'मैं ईश्वरमें विश्वास नहीं करता।' क्योंकि ईश्वर मनुष्यको, किसी दंड या हानिकारक परिणामके भयके बिना, अपने विषयमें हर तरहकी बातें कहने देता है। वह हमारे कार्योंको देखता है। उसके नियमके किसी भी भंगके साथ सजा तो अनिवार्य रूपमें जुड़ी ही होती है; परन्तु उस सजाके पीछे द्वेष या बदलेकी भावना नहीं होती, वह मनुष्यके हृदयको पवित्र बनानेवाली, सुधारके लिए उसे बाध्य करनेवाली होती है।

यं. इं., २३-९-'२६

जून १४

आत्मशुद्धिका मार्ग बड़ा विकट है। पूर्ण शुद्ध बननेका अर्थ है मनसे, वचनसे और कायासे निर्विकार बनना; राग-द्वेषादिके परस्परविरोधी प्रवाहोंसे ऊपर उठना।

आ. क., पृ. ४३३

जून १५

मैं मानता हूँ कि स्वस्थ आत्माका निवास स्वस्थ शरीरमें होना चाहिये। अत: आत्मा जितनी स्वस्थ और काम-क्रोधादि आवेगोंसे मुक्त बनेगी, उतना ही शरीर भी इस उच्च अवस्थाको प्राप्त करेगा।

यं. इं., ५-६-'२४

जून १६

पवित्रताके बाद दूसरा स्थान स्वच्छता और शुद्धताका आता है। जिस प्रकार अशुद्ध मनसे हम ईश्वरका आशीर्वाद प्राप्त नहीं कर सकते, उसी प्रकार अशुद्ध शरीरसे भी हम ईश्वरका आशीर्वाद प्राप्त नहीं कर सकते। शुद्ध शरीर अशुद्ध और अस्वच्छ नगरमें नहीं रह सकता।

यं. इं., १९-११-'२५

जून १७

संयम कभी हमारे स्वास्थ्यका नाश नहीं करता। हमारे स्वास्थ्यका नाश संयम नहीं करता, बल्कि बाहरी दमन करता है। जो मनुष्य सच्चे अर्थमें आत्म-संयमी होता है, वह प्रतिदिन अधिकाधिक शक्ति प्राप्त करता है और अधिकाधिक शान्ति अनुभव करता है। विचारोंका संयम आत्म-संयमकी पहली सीढ़ी है।

ह., २८-१०-'३७

जून १८

निर्दोष यौवन ऐसी अमूल्य सम्पत्ति है, जिसे क्षणिक उत्तेजनाके लिए, झूठे आनन्दके लिए नष्ट नहीं करना चाहिये।

ह., २१-९-'३५

जून १९

भाप तभी प्रचण्ड शक्तिका रूप लेती है जब वह अपने आपको एक मजबूत छोटेसे भंडारमें कैद होने देती है; और उसमें से अत्यन्त अल्प तथा निश्चित मात्रामें बाहर निकल कर ही वह जबरदस्त गति पैदा करती है और बड़े बड़े बोझ उठाकर ले जाती है। इसी प्रकार देशके नौजवानोंको स्वेच्छापूर्वक अपनी अखूट शक्तिको संयत तथा नियंत्रित होने देना चाहिये और अत्यन्त परिमित और आवश्यक मात्रामें ही उसे मुक्त होने देना चाहिये।

यं. इं., ३०-१०-'२९

जून २०

जिस प्रकार कोई भव्य और सुन्दर महल अपने निवासियों द्वारा छोड़ दिये जाने पर वीरान खंडहर जैसा दिखाई देता है, उसी प्रकार चरित्रके अभावमें मनुष्य भी टूटे-फूटे खंडहर जैसा दिखाई देता है – भले उसके पास भौतिक सम्पत्ति कितनी ही बड़ी मात्रामें क्यों न हो।

स. सा. अ., पृ. ३५५

जून २१

हमारी सारी विद्या या वेदोंका पाठ, संस्कृत-लेटिन-ग्रीक भाषाका शुद्ध ज्ञान और दुनियाकी दूसरी बड़ीसे बड़ी सिद्धि भी तब तक हमारे लिए किसी उपयोगकी नहीं है, जब तक वह हृदयकी पूर्ण शुद्धिका विकास करनेमें हमें समर्थ नहीं बनाती। समस्त ज्ञानका अंतिम लक्ष्य चरित्रका निर्माण ही होना चाहिये।

यं. इं., ८-९-'२७

जून २२

चरित्रके अभावमें ज्ञान केवल बुराईको जन्म देनेवाली शक्ति बन जाता है, जैसा कि संसारके अनेक 'प्रतिभाशाली चोरों' और 'सभ्य दुष्टों' के उदाहरणोंमें देखा जाता है।

यं. इं., २१-२-'२९

जून २३

मादक पदार्थ और मदिरा शैतानकी दो भुजायें हैं, जिनके प्रहाससे वह अपने लाचार बने हुए शिकारोंकी बुद्धि हर लेता है और उन्हें मतवाला बना देता है।

यं. इं., १२-४-'२६

जून २४

जब शैतान स्वतंत्रता, सभ्यता, संस्कृति और इसी प्रकारकी अन्य शुभ वस्तुओंके संरक्षकका जामा पहन कर सामने आता है, तब वह अपने आपको इतना बलवान और विश्वसनीय बना लेता है कि उसका विरोध करना लगभग असंभव हो जाता है।

यं. इं., ११-७-'२९

जून २५

मैं मदिरा-पानको चोरी और संभवत: वेश्यागमनसे भी अधिक निन्दनीय मानता हूँ। क्या वह अकसर इन दोनोंका जनक नहीं होता?

यं. इं., २३-२-'२२

जून २६

लोग अपनी परिस्थितियोंके कारण शराब पीते हैं। कारखानेंके मजदूर और ऐसे ही दूसरे लोग शराबका नशा करते हैं। वे लोग परित्यक्त और उपेक्षित हैं, समाज उनकी बिलकुल परवाह नहीं करता; इसीलिए अपनी इस दशाको भूलनेके लिए वे शराबकी शरण लेते हैं। जिस प्रकार मादक पदार्थोंका त्याग करनेवाले मनुष्य स्वभावसे सन्त नहीं होते, उसी प्रकार शराबी आदमी स्वभावसे दुष्ट और पापी नहीं होते। अधिकतर लोगों पर उनके वातावरणका प्रभाव और नियंत्रण होता है।

यं. इं., ८-९-'२७

जून २७

जो राष्ट्र मदिरा-पानके व्यसनका शिकार हो गया है, उसका सर्वनाश निश्चित है। इतिहासमें इसके प्रमाण मौजूद हैं कि इस दुर्व्यसनमें फँसनेवाले राष्ट्र नष्ट हो गये हैं।

यं. इं., ४-४-'२९

जून २८

मदिरा-पान पर प्रतिबन्ध लगानेवाला कानून लोगोंके अधिकारमें हस्तक्षेप करता है – इस दलीलमें उतना ही दोष है, जितना इस दलीलमें है कि चोरी पर प्रतिबन्ध लगानेवाले कानून लोगोंके चोरी करनेके अधिकारमें हस्तक्षेप करते हैं। चोर धन-दौलत और दूसरी भौतिक वस्तुएँ चुराता है, जब कि शराबी खुद अपने और अपने पड़ोसीके सम्मानकी चोरी करता है।

यं. इं., ६-१-'२७

जून २९

मदिराकी तरह धूम्रपानको भी मैं भयंकर वस्तु मानता हूँ। धूम्रपान मेरी दृष्टिमें एक दुर्व्यसन है। वह मुनष्यकी अन्तरात्माको जड़ बना देता है; और अकसर मदिरा-पानसे ज्यादा बुरा होता है, क्योंकि वह अदृष्ट रूपमें काम करता है। वह ऐसी लत है कि जब एक बार मनुष्य पर वह अपना अधिकार जमा लेती है तो उससे पिंड छुड़ाना कठिन होता है। वह खर्चीला दुर्व्यसन है। वह श्वासको गन्दा बनाता है, दांतोंकी चमकको नष्ट करता है और कभी कभी केंसर जैसे भयंकर रोगको जन्म देता है। धूम्रपान एक गन्दी लत है।

यं. इं., १२-१-'२१

जून ३०

धूम्रपान एक दृष्टिसे मदिरा-पानसे अधिक बड़ा अभिशाप है, क्योंकि उसका शिकार समय रहते उसकी बुराईको समझ नहीं पाता। धूम्रपानको जंगलीपनका चिह्न नहीं माना जाता; सभ्य लोग तो उसकी प्रशंसा भी करते हैं और उसके गुणगान करते हैं। मैं केवल

इतना ही कह सकता हूँ कि जो लोग धूम्रपानका व्यसन छोड़ सकते हैं, वे उसे छोड़ दें और दूसरोंके सामने उदाहरण पेश करें।

यं. इं., ४-२-'२६

जुलाई १

अहिंसा हमारी मानव-जातिका कानून है, जिस प्रकार हिंसा पशुओंका कानून है। पशुमें आत्मा सुप्त रूपमें रहती है; और वह शारीरिक शक्तिके सिवा अन्य किसी कानूनको नहीं जानता। मानवकी प्रतिष्ठाका यह तकाजा है कि वह अधिक ऊँचे कानूनका – आत्माके कानूनका – पालन करे।

यं. इं., ११-९-'२०

जुलाई २

अहिंसा सबसे ऊँची श्रेणीका सक्रिय बल है। वह आत्माका बल है अथवा हमारे भीतर रहनेवाला ईश्वरीय बल है। अपूर्ण मानव उस दिव्य बलको पूर्णतया समझ नहीं सकता – वह उसके पूर्ण तेजको सहन करनेमें समर्थ नहीं है। परन्तु जब उसका अणु जितना अतिसूक्ष्म अंश भी हमारे भीतर सक्रिय बनता है, तब वह आश्चर्यजनक परिणाम लाता है।

ह., १२-११-'३८

जुलाई ३

आकाशमें चमकनेवाला सूर्य सारे विश्वको अपने जीवनदायी तापसे भर देता है। परन्तु यदि कोई मनुष्य उसके बहुत अधिक पास चला जाये, तो सूर्य उसे जलाकर राख कर देगा। यही बात ईश्वरके विषयमें है। हम जिस हद तक अहिंसाको सिद्ध करते हैं उस हद तक हम ईश्वर-जैसे बनते हैं; परन्तु हम पूरे पूरे ईश्वर कभी नहीं बन सकते।

ह., १२-११-'३८

जुलाई ४

अहिंसा रेडियमके समान काम करती है। रेडियम धातुकी अत्यन्त अल्पमात्रा भी जब शरीरके किसी रोगग्रस्त भागके साथ जड़ दी जाती है, तो वह तब तक निरन्तर, चुपचाप और बिना रुके अपना काम करती रहती है जब तक रोगग्रस्त ग्रन्थिके सम्पूर्ण भागको

बदल कर नीरोग और स्वस्थ नहीं बना देती। इसी प्रकार सच्ची अहिंसाकी अल्पमात्रा भी चुपचाप सूक्ष्म और अदृश्य रूपमें अपना काम करती है और सारे समाजको जड़से बदल देती है।

ह., १२-११-'३८

जुलाई ५

अहिंसा मनुष्य-जातिके हाथमें बड़ीसे बड़ी शक्ति है। मनुष्यके बुद्धि-चातुर्यने संहार और सर्वनाशके जो प्रचंडसे प्रचंड अस्त्र-शस्त्र बनाये हैं, उनसे भी अहिंसा अधिक प्रचण्ड शक्ति है। सर्वनाश और संहार मानवोंका कानून नहीं है। मनुष्य आवश्यकता पड़ने पर अपने भाईके हाथों मरनेके लिए तैयार रह कर स्वतंत्रतासे जीता है, उसे मार कर कभी नहीं। प्रत्येक हत्या अथवा दूसरेको पहुँचाई गई चोट, फिर उसका उद्देश्य कुछ भी रहा हो, मानवताके खिलाफ एक अपराध है।

ह., २०-७-'३५

जुलाई ६

मेरा अहिंसा-धर्म एक अत्यन्त सक्रिय शक्ति है | उसमें कायरताका अथवा निर्बलताका भी कोई स्थान नहीं है | किसी हिंसक मनुष्यके बारेमें तो किसी दिन अहिंसक बननेकी आशा रखी जा सकती है, परन्तु कायर मनुष्यके बारेमें ऐसी आशा कभी नहीं रखी जा सकती इसलिए मैंने अनेक बार यह कहा है कि अगर हम अपने आपको, अपनी स्त्रियोंको और अपने पूजास्थानोंको कष्ट-सहनकी अर्थात् अहिंसाकी शक्तिसे बचाना नहीं जानते, तो कमसे कम लड़कर तो – यदि हम वास्तवमें पुरुष हैं – इन सबको बचानेका सामर्थ्य हममें होना ही चाहिये।

यं. इं., १६-६-'२७

जुलाई ७

मेरी अहिंसामें ऐसे लोगोंके लिए जरूर गुंजाइश है, जो शस्त्र धारण करते हुए और सफलतापूर्वक उनका उपयोग करते हुए अहिंसक नहीं हो सकते या नहीं होंगे। मैं हजारवीं बार यह दोहराना चाहता हूँ कि अहिंसा बलवानसे बलवान लोगोंके लिए है, निर्बलोंके लिए नहीं।

टा. इं., ८-५-'४१

जुलाई ८

कोई मनुष्य शरीरसे कितना ही कमजोर क्यों न हो, लेकिन यदि भागना लज्जाकी बात हो तो वह विरोधीकी शक्तिके सामने झुकेगा नहीं और अपनी जगह पर अडिग रहकर प्राण निछावर कर देगा। यह अहिंसा और वीरता होगी। भले वह कितना ही कमजोर क्यों न हो, परन्तु अपने शत्रुको चोट पहुँचानेमें वह अपनी सारी शक्ति लगा देगा और इस प्रयत्नमें जान दे देगा। यह वीरता है, लेकिन अहिंसा नहीं है। जब उसका कर्तव्य खतरेका सामना करना हो तब ऐसा न करके यदि वह भाग जाय, तो वह उसकी कायरता होगी। पहले उदाहरणमें मनुष्यमें प्रेम या करुणा होगी। दूसरेमें अरुचि या अविश्वास होगा। और तीसरेमें डर होगा।

ह., १७-८-'३५

जुलाई ९

अगर संसारके बड़ेसे बड़े विचारशील और बुद्धिशाली लोगोंने अहिंसाकी भावनाको सोच-समझकर ग्रहण न किया हो, तो उन्हें गुंडाशाहीका सामना पुरानी पद्धतिसे ही – पशुबलसे ही – करना होगा। लेकिन वह यही बतायेगा कि हम अभी तक जंगलके कानूनसे बहुत आगे नहीं बढ़े हैं, अभी तक हमने ईश्वरकी दी हुई विरासतकी कदर करना नहीं सीखा है और १९०० वर्ष पुराने ईसाई धर्मके, उससे भी प्राचीन हिन्दू और बौद्ध धर्मके तथा इस्लामके उपदेशोंके बावजूद मानव-प्राणियोंके नाते हमने बहुत अधिक प्रगति नहीं साधी

है। जिन लोगोंमें अहिंसाकी भावना नहीं है, उन लोगों द्वारा किये जानेवाले पशुबलके उपयोगको मैं समझ सकता हूँ; परन्तु जिन लोगोंमें अहिंसाकी भावना है उनसे तो मैं यही चाहूँगा कि वे इस बातका प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत करनेमें अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा दें कि गुंडाशाहीका सामना भी अहिंसासे ही करना चाहिये।

ह., १०-१२-'३८

जुलाई १०

निर्भयता – अभय आध्यात्मिकताकी पहली शर्त है। कायर मनुष्य कभी सदाचारी और नीतिमान हो ही नहीं सकता।

यं. इं., १३-१०-'२१

जुलाई ११

हम ईश्वरसे डरेंगे तो मनुष्यका हमारा डर मिट जायगा।

स्पी. रा. म., पृ. ३३०

जुलाई १२

एक निर्दोष मनुष्यका आत्म-बलिदान ऐसे दस लाख मनुष्योंके बलिदानसे दस लाख गुना अधिक शक्तिशाली है, जो दूसरोंको मारनेके कार्यमें मरते हैं। निर्दोषका स्वेच्छापूर्ण बलिदान उस उद्धत अत्याचारका अधिकसे अधिक शक्तिशाली उत्तर है, जिसकी ईश्वर या मनुष्यने आज तक कभी कल्पना की है।

यं. इं., १२-२-'२५

जुलाई १३

अहिंसाके साथ जुड़े हुए सत्यके बलसे आप सारे संसारको अपने पैरों पर झुका सकते हैं – अपने अधीन बना सकते हैं। सत्याग्रहका सार इसके सिवा और कुछ नहीं है कि राजनीतिक अर्थात् राष्ट्रीय जीवनमें सत्य और प्रेमको दाखिल किया जाय।

यं. इं., १०-३-'२०

जुलाई १४

सत्याग्रही भयको अंतिम नमस्कार कर देता है। इसलिए वह अपने विरोधी पर विश्वास करनेमें कभी डरता नहीं। यदी विरोधी बीस बार भी असत्यका व्यवहार करके उसके साथ दगा करे, तो सत्याग्रही इक्कीसवीं बार उस पर विश्वास करनेको तैयार रहता है; क्योंकि मानव-स्वभावमें पूर्ण विश्वास उसके अहिंसा-धर्मका सार है।

स. सा. अ., पृ. २४६

जुलाई १५

सत्याग्रही यदि स्वभावसे ही कानूनका पालन करनेवाला न हो, तो वह कुछ भी नहीं है। उसका यह स्वभाव ही उससे सर्वोच्च कानूनका पूर्ण पालन कराता है – वह सर्वोच्च कानून है अन्तरात्माकी आवाज, जिसका स्थान दूसरे सारे कानूनोंसे ऊँचा है।

स्पी. रा. म., पृ. ४६५

जुलाई १६

सत्याग्रह सौम्य वस्तु है; वह कभी चोट नहीं पहुँचाता। वह क्रोध या द्वेषका परिणाम नहीं होना चाहिये। उसमें कभी घूमघाम नहीं होती, कभी उतावली नहीं होती, कभी शोरगुल नहीं होता। वह जबरदस्तीकी ठीक उलटी वस्तु है। हिंसाका संपूर्ण स्थान ले सकनेवाली वस्तुके रूपमें ही उसकी कल्पना की गई है।

ह., १५-४-'३३

जुलाई १७

सत्याग्रह ऐसी शक्ति है, जिसका व्यक्ति और समाज दोनों उपयोग कर सकते हैं। जिस प्रकार उसका उपयोग घर-गृहस्थीके व्यवहारोंमें हो सकता है, उसी प्रकार राजनीतिक व्यवहारोंमें भी हो सकता है। सत्याग्रहका सर्वत्र प्रयोग किया जा सकता है, यही उसके स्थायित्वका और उसकी अजेयताका प्रबल प्रमाण है। पुरुष, स्त्रियाँ और बालक सब कोई उसका एकसा उपयोग कर सकते हैं। यह कहना बिलकुल झूठ है कि सत्याग्रह केवल

निर्बलों द्वारा उपयोगमें ली जानेवाली शक्ति है; और इसका उपयोग वे तभी तक करते हैं जब तक वे हिंसाका सामना हिंसासे करनेकी क्षमता प्राप्त नहीं कर लेते।

यं. इं., ३-११-'२७

जुलाई १८

सत्याग्रहकी शक्तिका हिंसासे और इसलिए सारे अत्याचारों, सारे अन्यायोंसे वैसा ही सम्बन्ध है, जैसा प्रकाशका अन्धकारके साथ है। राजनीतिमें उसका प्रयोग कभी न बदलनेवाले इस स्वयंसिद्ध सत्य पर निर्भर करता है कि लोगों पर शासन करना तभी तक संभव है, जब तक वे जाने या अनजाने शासित होना स्वीकार करें।

यं. इं., ३-११-'२७

जुलाई १९

क्रोधरहित और द्वेषरहित कष्ट-सहनका सूर्य जब उगता है, तब उसके सामने कठोरसे कठोर हृदय भी पिघल जाता है और घोरसे घोर अज्ञान भी नष्ट हो जाता है।

यं. इं., १०-२-'२५

जुलाई २०

प्रत्येक महान उद्देश्यमें लड़नेवालोंकी संख्याका महत्त्व नहीं होता, परन्तु वह गुण ही निर्णायक तत्त्व सिद्ध होता है, जिससे उन लड़वैयोंका निर्माण हुआ है। संसारके बड़ेसे बड़े पुरुष हमेशा अकेले ही खड़े रहे हैं।

यं. इं., १०-१०-'२९

जुलाई २१

उदाहरणके लिए, जरथुश्त, बुद्ध, ईसा और मुहम्मद जैसे महान पैगम्बरोंको लीजिये – ये सब दूसरे अनेक पैगम्बरोंकी तरह, जिनके नाम मैं गिना सकता हूँ, अपने उद्देश्यों पर अकेले ही खड़े रहे थे। परन्तु उनकी अपने आपमें और अपने ईश्वरमें जीवित श्रद्धा थी; और

यह विश्वास रखनेके कारण कि ईश्वर उनके पक्षमें है, उन्होंने अपनेको कभी अकेला अनुभव नहीं किया।

यं. इं., १०-१०-'२९

जुलाई २२

आप उस अवसरका स्मरण कर सकते हैं, जब अनेक शत्रु मुहम्मद पैगम्बरके पीछे पड़े हुए थे और अबू बकरने, जो पैगम्बरकी हिजरतमें उनका साथ दे रहा था, दोनोंके नसीबका विचार करके कांपते कांपते पैगम्बरसे कहा था: "आप शत्रुओंकी संख्याका तो विचार कीजिये, जो हमें पकड़नेके लिए हमारे पीछे पड़े हुए हैं। इस मुसीबतसे हम दो आदमी कैसे पार हो सकेंगे?" एक क्षणका भी विचार किये बिना पैगम्बर साहबने अपने वफादार साथीको उलाहना देते हुए कहा: "नहीं, अबू बकर, हम दो नहीं बल्कि तीन हैं; क्योंकि खुदा हमारे साथ है!" अथवा विभीषण और प्रह्लादकी अजेय श्रद्धाको लीजिये। मैं चाहता हूँ कि आप अपने आपमें और ईश्वरमें वैसी ही जीती-जागती श्रद्धा रखें।

यं. इं., १०-१०-'२९

जुलाई २३

सारे शरीरधारी प्राणियोंका अस्तित्व हिंसा पर ही निर्भर है। इसलिए सर्वोच्च धर्मकी व्याख्या अहिंसा जैसे नकारात्मक शब्द द्वारा की गई है। संसार संहार और नाशकी जंजीरमें बंधा हुआ है। दूसरे शब्दोंमे शरीरधारी प्राणियोंके लिए हिंसा एक स्वाभाविक आवश्यकता है। यही कारण है कि अहिंसाका पुजारी शरीरके बन्धनसे अंतिम, शाश्वत मुक्ति पानेके लिए सदा प्रार्थना करता है।

यं. इं., २-१०-२८

जुलाई २४

मेरा निश्चित रूपसे यह विश्वास है कि ईश्वरके सारे प्राणियोंको जीनेका उतना ही अधिकार है जितना कि हम मनुष्योंको है। यदि हमारे साथ इस धरती पर रहनेवाले

तथाकथित हिंसक और हानिकारक प्राणियोंकी हत्या करनेका कर्तव्य बतानेके बजाय ज्ञानवान लोगोंने अपनी बुद्धिशक्तिका उपयोग उनके साथ अन्य प्रकारसे व्यवहार करनेके रास्ते खोजनेमें किया होता, तो हम आज मानव-प्राणियोंकी प्रतिष्ठाको शोभा देनेवाली दुनियामें रहते होते – ऐसे मानव-प्राणी जिन्हें बुद्धिका वरदान मिला है और भले-बुरे, सही-गलत, हिंसा-अहिंसा तथा सत्य-असत्यके बीच चुनाव करनेकी शक्ति मिली है।

ह., ९-१-'३७

जुलाई २५

हम मृत्युके बीच रहकर सत्यकी दिशामें अंधोंकी तरह अपना मार्ग खोजनेके प्रयत्नमें लगे हुए हैं। शायद यह ठीक ही है कि जीवनमें हर कदम पर हम खतरेसे घिरे रहते हैं, क्योंकि इस खतरेका और अपने अनिश्चित अस्तित्वका ज्ञान रखते हुए भी केवल हमारा आश्चर्यजनक अभिमान ही ऐसा है, जो समग्र जीवनके मूल स्रोत ईश्वरके प्रति रही हमारी अपेक्षासे आगे बढ़ जाता है।

यं. इं., ७-७-'२७

जुलाई २६

मेरी बुद्धि और हृदय दोनों इस बातमें विश्वास करनेसे इनकार करते हैं कि तथाकथित हानिकारक प्राणी मनुष्यके हाथों नष्ट होनेके लिए ही उत्पन्न किये गये हैं। ईश्वर भला और बुद्धिमान है। भला और बुद्धिमान ईश्वर इतना बुरा और इतना मूर्ख नहीं हो सकता कि बिना हेतुके किसी प्राणीका सर्जन करे। इस विषयमें अपना अज्ञान स्वीकार करना और यह मान लेना अधिक तर्कसंगत होगा कि ईश्वरकी इस सृष्टिमें हर प्रकारके जीवनका – प्राणियोंका – कोई न कोई उपयोगी हेतु है, जिसका हमें धिरजसे पता लगानेका प्रयत्न करना चाहिये।

ह., ९-१-'३७

जुलाई २७

मैं निश्चित रूपसे यह मानता हूँ कि छोटेसे छोटा बहाना मिलते ही मनुष्यका वध कर डालनेकी मनुष्यकी आदतने उसकी बुद्धिको भ्रष्ट कर दिया है, और वह दूसरे प्राणियोंके साथ क्रूरताका व्यवहार करता है। यदि वह हृदयसे यह माने कि ईश्वर प्रेम और दयाका ईश्वर है, तो वह दूसरे प्राणियोंके साथ क्रूरताका व्यवहार करनेमें काँप उठेगा।

ह., ९-१-'३७

जुलाई २८

प्राणियोंकी चीरफाड़की क्रियासे मैं अपनी समग्र आत्मासे घृणा करता हूँ। विज्ञानके नाम पर और तथाकथित मानव-सेवाके नाम पर निर्दोष प्राणियोंका जो अक्षन्तव्य वध किया जाता है, उसे मैं धिक्कारता हूँ। निर्दोष प्राणियोंके रक्तसे कलंकित सारे वैज्ञानिक आविष्कारों और सारी खोजोंको मैं बिलकुल निरर्थक समझता हूँ।

यं. इं., १७-१२-'२५

जुलाई २९

जीवनके मेरे तत्त्वज्ञानमें साधन और साध्य पर्यायवाची शब्द हैं; दोनों एक-दूसरेका साथ ले सकते हैं।

यं. इं., २६-१२-'२४

जुलाई ३०

लोग कहते हैं: "साधन आखिर साधन ही हैं।" मैं कहूँगा: "साधन ही आखिर सब कुछ हैं।" जैसे साधन होंगे वैसा ही साध्य होगा। हिंसक साधनोंसे हमें हिंसक स्वराज्य ही मिलेगा। वह स्वराज्य संसारके लिए और स्वयं हिन्दुस्तानके लिए भी संकटरूप सिद्ध होगा। फ्रान्सने अपनी स्वतंत्रता हिंसक साधनों द्वारा प्राप्त की । वह अभी तक अपनी इस हिंसाकी महँगी कीमत चुका रहा है।

यं. इं., १७-७-'२४

जुलाई ३१

साधन और साध्यके बीच दोनोंको अलग करनेवाली कोई दीवाल नहीं है। बेशक, सरजनहार प्रभुने साधनों पर नियंत्रण रखनेकी शक्ति हमें दी है (वह भी अत्यन्त सीमित मत्रामें), परन्तु साध्य पर नियंत्रण रखनेकी कोई शक्ति नहीं दी है। लक्ष्यकी सिद्धि ठीक साधनोंकी सिद्धिके अनुपातमें ही होती है। यह ऐसा सिद्धान्त है, जिसमें अपवादकी कोई गुंजाइश ही नहीं है।

यं. इं., १७-७-'२४

अगस्त १

जो अर्थशास्त्र किसी व्यक्ति अथवा किसी राष्ट्रके नैतिक कल्याणको हानि पहुँचाता है, वह अनैतिक है और इसलिए पापपूर्ण है। इसी तरह जो अर्थशास्त्र एक देशको दूसरे देशका शोषण करने और उसे लूटनेकी इजाजत देता है वह अनैतिक है। शोषणके शिकार बने हुए मजदूरोंकी तनतोड़ मेहनतसे तैयार की गई चीजें खरीदना और उनका उपयोग करना पाप है।

यं. इं., १३-१०-'२१

अगस्त २

जो अर्थशास्त्र नैतिकताकी और मानव-भावनाओंकी उपेक्षा करता है, वह मोमके उन पुतलोंकी तरह है जो जीवित-जैसे दिखायी देने पर भी जीवधारी मानवोंकी तरह प्राणवान नहीं होते। गहरा चिन्तन किये बिना ईजाद किये हुए आजके ये नये आर्थिक कानून कसौटीके हर मौके पर व्यवहारमें निष्फल और व्यर्थ सिद्ध हुए हैं। और जो राष्ट्र या व्यक्ति इन कानूनोंको अपने मार्गदर्शक स्वयंसिद्ध सत्योंके रूपमें स्वीकार करते हैं उनका नाश निश्चित है।

यं. इं., २७-१०-'२१

अगस्त ३

अर्थशास्त्रके क्षेत्रमें अहिंसाके कानूनको ले जानेका अर्थ है उस क्षेत्रमें नैतिक मूल्योंको दाखिल करना। आन्तर-राष्ट्रीय व्यापारका नियमन करनेमें इन नैतिक मूल्योंका ध्यान रखना जरूरी है।

यं. इं., २६-१२-'२४

अगस्त ४

एक स्थानसे दूसरे स्थानकी दूरी और समयके भेदको मिटाने, भोग-विलासकी भूखको बढ़ाने तथा उसकी तृप्तिके साधनोंकी खोजमें धरती के एक छोरसे दूसरे छोर तक

जानेकी इस पागलपनभरी इच्छासे मैं पूरे दिलसे नफरत करता हूँ। यदि आधुनिक सभ्यता इन्हीं सबकी प्रतीक हो, और मैं स्वयं तो इसे ऐसी ही मानता हूँ, तो मैं इस सभ्यताको शैतानी सभ्यता कहूँगा।

यं. इं., १७-३-'२७

अगस्त ५

मेरा लक्ष्य रेलों और अस्पतालोंको नष्ट करनेका नहीं है, यद्यपि वे स्वाभाविक रूपमें नष्ट हो जायँ तो मैं निश्चित ही उसका स्वागत करूँगा। रेलें अथवा अस्पतालें ऊँची और शुद्ध सभ्यताकी कसौटी या मापदण्ड नहीं हैं। अधिकसे अधिक उनके पक्षमें कहा जाय तो वे एक आवश्यक बुराई हैं। दोनोंमें से एक भी किसी राष्ट्रकी नैतिक ऊँचाईमें एक इंचकी भी वृद्धि नहीं करती।

यं. इं., २६-१-'२१

अगस्त ६

एक स्थानसे दूसरे स्थान तक जानेके तेज साधनोंकी वजहसे दुनियाकी स्थितिमें क्या थोड़ा भी सुधार हुआ है? ये साधन मनुष्यकी आध्यात्मिक प्रगतिको किस प्रकार आगे बढ़ाते हैं? क्या वे अन्तमें इस प्रगतिको रोकते नहीं हैं? और क्या मनुष्यकी महत्त्वाकांक्षाकी कोई सीमा है? एक समय ऐसा था जब एक घंटेमें कुछ मीलकी यात्रा करके हम संतुष्ट रहते थे; आज हम एक घंटेमें सैकड़ों मीलका फासला तय करना चाहते हैं। एक दिन ऐसा भी आयेगा जब हम अंतरिक्षमें उड़ना चाहेंगे। लेकिन इसका परिणाम क्या होगा? अव्यवस्था, अन्धाधुन्धी।

यं. इं., २१-१-'२६

अगस्त ७

मेरा यह पक्का विश्वास है कि यूरोप आज ईश्वरकी आवनाका या ईशाई धर्मकी सच्ची भावनाका नहीं, परन्तु शैतानकी भावनाका प्रतिनिधित्व करता है। और शैतानकी सफलता

तब अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाती है, जब वह अपने होठों पर ईश्वरका नाम लेकर सामने आता है। यूरोप आज केवल नामको ही ईसाका अनुयायी है। वास्तवमें वह धनकी ही पूजा कर रहा है।

यं. इं., ८-९-'२०

अगस्त ८

"ब्रह्माने यज्ञके कर्तव्यके साथ अपनी प्रजाको उत्पन्न किया और कहा: 'यज्ञकी सहायतासे तुम फलो-फूलो। वह तुम्हारी सारी कामनायें पूर्ण करे।' जो मनुष्य यह यज्ञ किये बिना खाता है, वह चोरीका अन्न खाता है" – ऐसा गीता कहती है।*

ह., २९-६-'३५

---

* गीताके जिन श्लोकोंमें यह विचार व्यक्त किया गया है, वे इस प्रकार हैं: सहयज्ञा: प्रजा: सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापति:।

अनेन प्रसविष्यध्वम् एष वोऽस्त्विष्ट-कामधुक्॥

इष्टान् भोगान् हि वो देवा: दास्यन्ते यज्ञभाविता:।

तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः॥

(अ० ३, श्लो० १०, १२)

अगस्त ९

'अपना पसीना बहाकर रोटी कमाओ' यह बाइबलका वचन है। यज्ञ अनेक प्रकारके हो सकते हैं। उनमें से एक शरीर-श्रम अथवा रोटीके लिए श्रम भी हो सकता है। अगर सब लोग अपनी रोटी कमाने जितना ही श्रम करें, तो भी इस जगतमें सबके लिए पर्याप्त अन्न होगा और सबको काफी फुरसत मिलेगी।

ह., २९-६-'३५

अगस्त १०

उस स्थितिमें न तो आवश्यकतासे अधिक जनसंख्याका हल्ला मचेगा, न कोई रोग रहेगा और न ऐसा कोई दुःख-दर्द रहेगा जैसा आज हम अपने चारों ओर फैला हुआ देखते हैं। ऐसा श्रम यज्ञका उत्तम रूप होगा। बेशक, मनुष्य अपने शरीरों अथवा मस्तिष्कोंकी सहायतासे दूसरे अनेक काम करेंगे, परन्तु वह सब जन-साधारणके भलेके लिए किया जानेवाला प्रेमका श्रम होगा। उस हालतमें न तो दुनियामें अमीर और गरीब होंगे, न कोई ऊँचे और नीचे होंगे और न कोई स्पृश्य और अस्पृश्य होंगे।

ह., २९-६-'३५

अगस्त ११

यदि हम यज्ञके सम्पूर्ण नियमका – अर्थात् अपने जीवनके नियमका – पूरी तरह पालन न कर सकें और केवल अपनी रोजकी रोटीके लिए ही पर्याप्त शरीर-श्रम करें, तो भी हम इस आदर्शकी दिशामें काफी आगे बढ़ जायेंगे। अगर हम ऐसा करें तो हमारी आवश्यकताएँ कमसे कम हो जायँगी और हमारा भोजन सादा हो जायगा। तब हम जीनेके लिए खायेंगे, खानेके लिए नहीं जियेंगे। जिस किसीको इस कथनकी सचाईमें शंका हो, वह अपनी रोटीके लिए पसीना बहानेका प्रयत्न करे; वह अपने श्रमसे उत्पन्न की हुई चीजोंमें बड़ेसे बड़ा स्वाद और आनन्द प्राप्त करेगा, उसकी श्रद्धा शरीर-श्रममें बढ़ेगी और उसे इस बातका पता चलेगा कि जो बहुतसी चीजें वह खाता था वे अनावश्यक थीं।

ह., २९-६-'३५

अगस्त १२

मैं ऐसे किसी समयकी कल्पना नहीं कर सकता जब कोई आदमी दूसरोंसे ज्यादा धनी नहीं होगा। लेकिन मैं ऐसे समयकी कल्पना अवश्य करता हूँ जब धनी लोग गरीबोंको नुकसान पहुँचा कर अपनी सम्पत्ति बढ़ानेसे नफरत करेंगे और गरीब लोग धनिकोंसे ईर्ष्या

करना छोड़ देंगे। अधिकसे अधिक पूर्ण जगतमें भी हम असमानताओंको टाल नहीं सकेंगे। परन्तु हम संघर्ष और कड़वाहटको अवश्य टाल सकते हैं और हमें टालना चाहिये।

यं. इं., ७-१०-'२६

अगस्त १३

मैं जो स्वप्न सिद्ध करना चाहता हूँ वह मालिकोंकी व्यक्तिगत सम्पत्तिको लूटनेका नहीं है; वह तो सम्पत्तिके उपयोग पर अंकुश लगानेका स्वप्न है, जिससे सारी गरीबी टले, गरीबीसे पैदा होनेवाला असंतोष दूर हो तथा आज अमीरों और गरीबोंके जीवन और वातावरणमें जो भयंकर तथा अशोभन विरोध दिखाई देता है उसका अन्त हो।

यं. इं., २१-११-'२९

अगस्त १४

जड़ यंत्रोंको उन लाखों करोड़ों जीवित यंत्रोंकी बराबरी में नहीं खड़ा करना चाहिये, जो भारतके सात लाख गांवोंमें ग्रामवासियोंके रूपमें फैले हुए हैं।

ह., १४-९-'३५

अगस्त १५

यंत्रका अच्छा उपयोग यही होगा कि वह मनुष्यके श्रममें मदद करे और उसे आसान बनाये। आज यंत्रका जैसा उपयोग होता है वह लाखों पुरुषों और स्त्रियोंके मुँहकी रोटी छीन लेता है और उनकी बिलकुल परवाह न करके मुट्ठीभर लोगोंके हाथोंमें अधिकाधिक मात्रामें दौलत इकट्ठी करता है।

ह., १४-९-'३५

अगस्त १६

यंत्रके उपयोगका विचार करते समय हमारी दृष्टिमें प्रमुख स्थान मनुष्यका होना चाहिये। यंत्रके उपयोगका परिणाम मनुष्यके अंगोंको कमजोर और अपंग बनानेके रूपमें नहीं आना चाहिये।

यं. इं., १३-११-'२४

अगस्त १७

मैं यंत्रोंका विरोध नहीं करता, परन्तु यंत्रोंके लिए दिखाये जानेवाले पागलपनका विरोध करता हूँ। आज यह पागलपन उन यंत्रोंके लिए है, जिन्हें मेहनत बचानेवाले यंत्र कहा जाता है। मनुष्य तब तक 'मेहनत बचाते चले जाते हैं' जब तक हजारों लोग बेकार नहीं हो जाते और खुले रास्तों पर भूखों मरनेके लिए नहीं फेंक दिये जाते।

यं. इं., १३-११-'२४

अगस्त १८

लेकिन यह प्रश्न पूछा जाता है कि लाखों लोगोंकी मेहनत बचा कर उन्हें साहित्य, संगीत, कला आदि बौद्धिक विषयोंके अध्ययन और विकासके लिए अधिक फुरसत क्यों न दी जाय? फुरसत एक हद तक ही अच्छी और जरूरी है। ईश्वरने मनुष्यको अपने पसीनेकी रोटी खानेके लिए उत्पन्न किया है। इस संभावनाके विषयमें सोच कर मैं डर जाता हूँ कि कहीं हम अपनी जरूरतकी सारी चीजें, जिनमें हमारे खाद्य-पदार्थ भी आ जाते हैं, जादूका मंत्र फूंककर पैदा करनेकी शक्ति न प्राप्त कर लें।

ह., १६-५-'३६

अगस्त १९

मैं कुछ लोगोंके लिए नहीं बल्कि सारी मानव-जातिके लिए समय और मेहनत बचाना चाहता हूँ। मैं कुछ लोगोंके हाथोंमें नहीं बल्कि सब लोगोंके हाथोंमें दौलत इकट्ठी करना चाहता हूँ। आज यंत्र मुट्ठीभर लोगोंको लाखों मनुष्योंकी पीठ पर सवार होनेमें ही मदद करते हैं। इस सबके पीछे मेहनत बचानेके लिए मानव-दयाकी प्रेरणा काम नहीं

करती, बल्कि मनुष्यका लोभ काम करता है। इसी परिस्थितिके खिलाफ मैं अपनी सारी शक्ति लगाकर लड़ रहा हूँ।

यं. इं., १३-११-'२४

अगस्त २०

चरखेका आन्दोलन कुछ लोगोंके हाथमें धन और सत्ताका केन्द्रीकरण करने तथा अधिक लोगोंका शोषण करनेके स्थानसे यंत्रोंको हटा कर उनके उचित स्थान पर उन्हें बैठानेका संगठित प्रयत्न है। इसलिए मेरी योजनामें यंत्रोंका संचालन करनेवाले मनुष्य केवल अपना या अपने राष्ट्रका ही विचार नहीं करेंगे, परन्तु सारी मानवजातिका विचार करेंगे।

यं. इं., १७-९-'२५

अगस्त २१

चरखेके लिए मैं इस सम्मानका दावा करता हूँ कि वह आर्थिक कष्टकी समस्याको अत्यन्त स्वाभाविक, सादे, सस्ते और व्यावहारिक रूपमें हल करनेकी क्षमता रखता है। इसलिए चरखा न केवल निकम्मा ही नहीं है... बल्कि वह हर घर और हर परिवारके लिए एक उपयोगी और अनिवार्य वस्तु है। वह हमारे राष्ट्रकी समृद्धिका प्रतीक है और इसलिए हमारी स्वतंत्रताका प्रतीक है। वह व्यापारिक युद्धका नहीं, परन्तु व्यापारिक शान्तिका प्रतीक है।

यं. इं., ८-१२-'२१

अगस्त २२

चरखेमें दुनियाके राष्ट्रोंके लिए दुर्भावनाका नहीं, परन्तु सद्भावना और आत्म-सहायताका सन्देश समाया हुआ है। चरखेके संरक्षणके लिए विशाल जहाजी बेड़े और जलसेनाकी जरूरत नहीं होगी, जो विश्वकी शांतिके लिए एक खतरा बन जाती है और उसकी साधन-सामग्रीका शोषण करती है; चरखेके लिए जरूरत है लाखों स्त्री-पुरुषों द्वारा

अपने घरोंमें ही अपना सूत कातनेका धार्मिक संकल्प करनेकी, जिस तरह आज वे अपना भोजन अपने घरोंमें ही तैयार कर लेते हैं।

यं. इं., ८-१२-'२१

अगस्त २३

जब मैं रूसको देखता हूँ, जहाँ उद्योगवादकी देवताकी तरह पूजा होने लगी है, तो वहाँका जीवन मुझे पसन्द नहीं आता। बाइबलकी भाषाका उपयोग किया जाय तो "अगर मनुष्यको सारी दुनियाका राज्य मिल जाय और वह अपनी आत्माको खो दे, तो दुनियाका राज्य उसके लिए किस कामका?" आधुनिक भाषामें कहा जाय तो अपना व्यक्तित्व खोकर मशीनका एक पुर्जा बन जाना मानव-प्रतिष्ठाके विरुद्ध है। मैं चाहता हूँ कि हर मनुष्य समाजका प्राणवान और पूर्ण विकसित सदस्य बने।

ह., २८-१-'३९

अगस्त २४

अंतिम विश्लेषणमें साम्यवादका क्या अर्थ है? उसका अर्थ है वर्ग-विहीन समाज। यह एक ऐसा आदर्श है, जिसकी प्राप्तिके लिए प्रयत्न किया जाना चाहिये। मैं तभी उससे अपना सम्बन्ध तोड़ता हूँ, जब उसे सिद्ध करनेके लिए पशुबल – हिंसा – की सहायता ली जाती है। हम सब समान उत्पन्न हुए हैं; लेकिन हमने इन सारी शताब्दियोंमें ईश्वरकी इच्छाका विरोध किया है। असमानताका विचार, 'ऊंच और नीच' का भाव एक बुराई है; लेकिन मनुष्यके हृदयसे इस बुराईका उच्छेद तलवार या बन्दूककी मददसे करनेमें मेरा विश्वास नहीं है। मानव-हृदयको बदलनेमें ये साधन उपयोगी सिद्ध नहीं होते।

ह., १३-३-'३७

अगस्त २५

हर मनुष्यको जीवनकी जरूरतें हासिल करनेका समान अधिकार है, जिस प्रकार पक्षियों और पशुओंको है। और चूंकि हरएक अधिकारके साथ उसके अनुरूप कर्तव्य

जुड़ा रहता है तथा उस पर होनेवाले आक्रमणका विरोध करनेके लिए अनुरूप उपाय भी जुड़ा रहता है, इसलिए प्राथमिक मूलभूत समानताकी स्थापना करनेके लिए केवल उसके साथ जुड़े हुए कर्तव्यों और उपायोंका पता लगाना ही बाकी रह जाता है। उसके साथ जुड़ा हुआ कर्तव्य है अपने हाथ-पैरोंसे श्रम करना; और उपाय है उस मनुष्यके साथ असहयोग करना, जो हमें अपने श्रमके फलसे वंचित करता है।

यं. इं., २६-३-'३१

अगस्त २६

अधिकारोंका सच्चा स्रोत कर्तव्य है। अगर हम सब अपने कर्तव्योंका पालन करें, तो अधिकारोंको खोजने बहुत दूर नहीं जाना पड़ेगा। अगर अपने कर्तव्योंका पालन किये बिना हम अधिकारोंके पीछे दौड़ते हैं, तो वे मृगजलके समान हमसे दूर भागते हैं। हम जितना ज्यादा उनका पीछा करते हैं, उतने ही ज्यादा वे हमसे दूर भागते हैं। यही उपदेश भगवान कृष्णके इन अमर शब्दोंमें समाया हुआ है; 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' - केवल कर्म पर ही तेरा अधिकार है, उसके फल पर कभी नहीं। इस वाक्यमें कर्म कर्तव्यका सूचक है और फल अधिकारका।

यं. इं., ८-१-'२५

अगस्त २७

मजदूर-वर्गको अपना गौरव और अपनी शक्ति पहचाननी चाहिये। मजदूरोंकी तुलनामें पूंजीपतियोंमें न तो गौरव है और न शक्ति है। ये दोनों चीजें सामान्य मनुष्यके पास भी होती हैं। किसी सुव्यवस्थित लोकतान्त्रिक समाजमें अराजकता या हड़तालोंके लिए कोई अवकाश या मौका ही नहीं है। ऐसे समाजमें न्याय प्राप्त करनेके लिए काफी कानूनी साधन होते हैं। उसमें छिपी या खुली हिंसाके लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिये।

दि. डा., पृ. ३८१

अगस्त २८

पूंजीपति मजदूरों पर नियंत्रण रखते हैं, क्योंकि वे मेल या संयोजनकी कला जानते हैं। पानीकी बूँदें अलग अलग रहती हैं तो वे सूख जाती हैं; वे ही बूँदें अपसमें मिल कर महासागरको बनाती हैं, जो अपने विशाल पट पर बड़े बड़े जहाज ले जाता है। इसी प्रकार दुनियाके किसी भी भागमें अगर सारे मजदूर मिलकर संगठित हो जायँ, तो वे ऊँची तनखाहोंके लोभमें नहीं फँसेंगे, या लाचार बनकर थोड़ेसे भत्तेकी ओर आकर्षित नहीं होंगे।

ह., ७-९-'४७

अगस्त २९

मजदूरोंका सच्चा और अहिंसक संगठन सारी आवश्यक पूंजीको अपनी ओर खींचनेमें चुम्बकका काम करेगा। उस हालतमें पूंजीपति केवल ट्रस्टियोंकी तरह ही रहेंगे। जब वह शुभ और सुखद दिन आयेगा तब पूंजीपतियों में और मजदूरोंमें कोई फर्क नहीं रह जायेगा। उस समय मजदूरोंको पूरा खाना मिलेगा, अच्छे और हवाप्रकाशवाले साफ-सुथरे मकान मिलेंगे, उनके बच्चोंको सारी आवश्यक शिक्षा मिलेगी, उन्हें अपने आपको शिक्षा देनेके लिए पूरा समय मिलेगा और उपयुक्त डॉक्टरी मदद मिलेगी।

ह., ७-९-'४७

अगस्त ३०

अमेरिका आज बड़े बड़े उद्योगोंकी दृष्टिसे दुनियाका सबसे आगे बढ़ा हुआ देश है। फिर भी वह गरीबी और नैतिक पतनको देशनिकाला नहीं दे पाया है। इसका कारण यह है कि अमेरिकाने सब जगह उपलब्ध मानव-शक्तिकी उपेक्षा की और मुट्ठीभर लोगोंके हाथोंमें सत्ताको केन्द्रित कर दिया, जिन्होंने अनेक लोगोंको चूस कर और दुःखी बनाकर सम्पत्ति जमा कर ली। नतीजा यह है कि अमेरिकाका उद्योगीकरण उसके अपने गरीबोंके लिए और बाकीकी दुनियाके लिए एक भारी संकट बन गया है।

ह., ९-३-'४७

अगस्त ३१

अगर भारतको ऐसे सर्वनाश और बरबादीसे बचना हो, तो उसे अमेरिका और दूसरे पश्चिमी देशोंकी उत्तम बातोंका अनुकरण करना चाहिये और उनकी ऊपरसे आकर्षक दिखाई देनेवाली परन्तु वास्तवमें नाशकारी आर्थिक नीतियोंसे अलग रहना चाहिये। इसलिए भारतकी दृष्टिसे सच्ची योजना यह होगी कि उसकी सम्पूर्ण मानव-शक्तिका उत्तम उपयोग किया जाय और भारतके कच्चे मालको विदेशोंमें भेजनेके बजाय उसके असंख्य गाँवोंमें ही बाँटा जाय; क्योंकि कच्चा माल विदेशोंमें भेजनेका अर्थ होगा उससे बनी तैयार चीजोंको भारी दाम चुकाकर खरीदना।

ह., २३-३-'४७

सितम्बर १

दरिद्र-नारायण उन लाखों नामोंमें से एक नाम है, जिनके द्वारा मनुष्य-जाति ईश्वरको जानती-पहचानती है। ईश्वरको वास्तवमें कोई नाम नहीं दिया जा सकता; और मानव-बुद्धिके लिए ईश्वरको समझना कठिन है। दरिद्र-नारायणका अर्थ है दरिद्रोंका, गरीबोंका, ईश्वर; गरीबोंके हृदयमें बसने और प्रकट होनेवाला ईश्वर।

यं. इं., ४-४-'२९

सितम्बर २

लाखों-करोड़ों मूक मानवोंके हृदयोंमें बसनेवाले ईश्वरके सिवा दूसरे किसी ईश्वरको मैं नहीं जानता। वे ईश्वरकी उपस्थितिको नहीं समझते, जब कि मैं उसे समझता हूँ। और मैं इन लाखों मूक मानवोंकी सेवाके जरिये ईश्वरकी - जो सत्य है - अथवा सत्य की - जो ईश्वर है – पूजा करता हूँ।

ह., ११-३-'३९

सितम्बर ३

गरीबोंके लिए चरखेका आर्थिक पहलू ही वास्तवमें आध्यात्मिक पहलू है। भूखों मरनेवाले उन लाखों लोगोंके सामने चरखेका दूसरा कोई पहलू आप रख ही नहीं सकते। उसका उन लोगों पर कोई असर नहीं होगा। लेकिन आप उनके पास खाना लेकर जाइये और वे आपको अपना ईश्वर समझेंगे। दूसरा कोई विचार करनेमें वे असमर्थ हैं।

यं. इं., ५-५-'२७

सितम्बर ४

अपने इसी हाथसे मैंने उन लोगोंसे वे जंग चढ़े मटमैले पैसे इकट्ठे किये हैं, जो उनके फटे चीथड़ोंमें कसकर बंधे हुए थे। आपका उनके सामने आधुनिक प्रगतिकी बात करना बेकार है। उनके सामने व्यर्थ ही ईश्वरका नाम लेकर आप उनका अपमान न करें। अगर

आप और मैं उनसे ईश्वरके विषयमें बात करेंगे, तो वे हमें राक्षस कहेंगे। अगर वे किसी ईश्वरको जानते हों तो उसकी कल्पना उनके मनमें भयंकर और बदला लेनेवाले ईश्वरके रूपमें और निर्दय अत्याचारी ईश्वरके रूपमें ही है।

यं. इं., १५-९-'२७

सितम्बर ५

मैं आजके कृत्रिम भोग-विलास-प्रधान जीवनके खिलाफ प्रचार करता हूँ और पुरुषों तथा स्त्रियोंसे पीछे लौटाकर सादा जीवन अपनानेको कहता हूँ - चरखा जिसका छोटे रूपमें प्रतिनिधित्व करता है। ऐसा मैं इसलिए करता हूँ कि मैं जानता हूँ कि समझ-बूझकर सादगीकी ओर लौटे बिना हम उस स्थितिको पहुँचनेसे बच नहीं सकते, जो पशुताकी स्थितिसे भी नीची है।

यं. इं., २१-७-'२१

सितम्बर ६

पश्चिमसे आपके पास जो तड़क-भड़क आती है, उससे आप चौंधिया न जायँ। इस क्षणिक दिखावेके मोहमें फँसकर आप अपने मूल आधारको न छोड़ें, जिस पर आप खड़े हैं। बुद्ध भगवानने कभी न भुलाये जाने लायक शब्दोंमें आपसे कहा है कि यह अल्प मानव-जीवन अनित्य छायाके सिवा, क्षणभरमें उड़ जानेवाली वस्तुके सिवा और कुछ नहीं है। और अगर आप अपनी आँखोंके सामने दिखाई देनेवाली हर वस्तुकी अनित्यता और शून्यताको समझ लें, हमारी आँखोंके सामने सतत बदलते रहनेवाले इस पार्थिव शरीरकी क्षणभंगुरताको पहचान लें, तो ऊपर स्वर्गमें आपके लिए सुख और शान्तिका भंडार भरा रहेगा और यहाँ इस जगतमें आपको ऐसी शांति मिलेगी जो हमारी समझसे परे है और ऐसा सुख प्राप्त होगा जिससे हम बिलकुल अपरिचित हैं। यह तभी होगा जब आपमें आश्चर्यजनक श्रद्धा, दिव्य श्रद्धा होगी और आप सारी दृश्य वस्तुओंका त्याग कर देंगे।

यं. इं., ८-१२-'२७

सितम्बर ७

बुद्धने क्या किया? ईसाने क्या किया? और मुहम्मदने भी क्या किया? उनके जीवन आत्म-बलिदान और त्यागके जीवन थे। बुद्धने संसारके सारे सुखोंका त्याग कर दिया, क्योंकि वे अपने उस सुखमें सारे जगतको साझेदार बनाना चाहते थे, जो सत्यकी शोधके लिए त्याग करनेवाले और कष्ट भोगनेवाले मनुष्यों द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता था।

यं. इं., ८-१२-'२७

सितम्बर ८

अगर गौरीशंकर पर्वतकी ऊँचाई नापने और उसके शिखर पर चढ़ कर कुछ सामान्य निरीक्षण करनेके लिए बहुमूल्य जीवनोंका बलिदान देना अच्छी बात हो, अगर पृथ्वीके दूरसे दूरके छोरों पर – उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों पर – झंडा रोपनेके लिए अनेक मनुष्योंका प्राणोत्सर्ग करना भव्य वस्तु हो, तो अत्यन्त शक्तिशाली और अनश्वर अमर सत्यकी शोधके लिए एक मनुष्यका नहीं, लाखों मनुष्योंका नहीं, परन्तु करोड़ों मनुष्योंका जीवन उत्सर्ग करना भी कितना अधिक भव्य होगा?

यं. इं., ८-१२-'२७

सितम्बर ९

ऐसा समय आ रहा है जब वे लोग, जो आज पागलोंकी तरह अपनी जरूरतें बढ़ानेकी तेज दौड़में लगे हुए हैं और अहंकारसे यह सोचते हैं कि ऐसा करके वे दुनियाकी सच्ची सम्पत्तिको बढ़ाते हैं, दुनियाके सच्चे ज्ञानमें वृद्धि करते हैं, अपने कदम पीछे लौटायेंगे और कहेंगे: "हमने क्या किया है?"

यं. इं., ८-१२-'२७

सितम्बर १०

सभ्यतायें आई हैं और चली गई हैं; और हमारी सारी अहंकारपूर्ण प्रगतिके बावजूद मेरा बार बार यह पूछनेका मन होता है कि "इस सारी प्रगतिका उद्देश्य क्या है?" डार्विनके समकालीन वॉलेसने भी यही बात कही है। उन्होंने कहा है कि पिछले पचास वर्षोंके भव्य आविष्कारों और शोधोंने मानव-जातिकी नैतिक ऊँचाईमें एक इंचकी भी वृद्धि नहीं की है। ऐसा ही टॉल्स्टॉयने भी कहा है, जिन्हें आप चाहें तो स्वप्नद्रष्टा और कल्पना-जगतमें विहार करनेवाला कह सकते हैं। और यही बात अपने अपने समयमें ईसाने, बुद्धने और मुहम्मदने भी कही थी – जिनके धर्मसे आज मेरे ही देशमें इनकार किया जा रहा है और जिसे मेरे ही देशमें झुठलाया जा रहा है।

यं. इं., ८-१२-'२७

सितम्बर ११

गिरि-प्रवचनमें दिये गये ईसाके उपदेशामृतका आप लोग जी भर कर पान कीजिये। लेकिन तब आपको अपने पापोंके लिए पश्चात्तापका तथा त्याग और तपस्याका जीवन अपनाना होगा। गिरि-प्रवचनका उपदेश हममें से हरएकके लिए है। आप ईश्वरकी और धनकी सेवा साथ साथ नहीं कर सकते। ईश्वर करुणा, दया और सहिष्णुताका अवतार है। वह धनको अपनी 'चार दिनकी चांदनी' मनाने देता है। लेकिन मैं आपसे कहता हूँ: "आप धनके स्वयं अपना नाश करनेवाले और दूसरोंका नाश करनेवाले आडम्बर और दिखावेसे दूर भागिये।"

यं. इं., ८-१२-'२७

सितम्बर १२

भारतका भविष्य पश्चिमके हिंसक मार्ग पर निर्भर नहीं करता, जिस पर चल कर पश्चिम स्वयं थका हुआ दिखाई देता है; भारतका भविष्य ऐसे शांतिके मार्ग पर निर्भर करता है, जो सादे और पवित्र ईश्वर-परायण जीवनका परिणाम है। आज भारतके सामने अपनी

आत्माको खोनेका खतरा पैदा हो गया है। वह अपनी आत्माको खोकर जिन्दा नहीं रह सकता। इसलिए उसे निष्क्रिय और लाचार बनकर यह नहीं कहना चाहिये: "में पश्चिमके आक्रमणसे बच नहीं सकता।" उसे स्वयं अपने खातिर और सारी दुनियाके खातिर इस आक्रमणका सामना करनेकी पर्याप्त शक्ति अपनेमें पैदा करनी चाहिये।

यं. इं., ७-१०-'२६

सितम्बर १३

मेरा यह विश्वास जरूर है कि भारत कष्ट-सहनकी आगमें से पार होनेके लिए तथा अपनी सभ्यता पर – जो निःसन्देह अपूर्ण होते हुए भी कालके विनाशकारी प्रभावके सामने आज तक टिकी रही है – होनेवाले किसी भी अनुचित आक्रमणका विरोध करनेके लिए यदि पर्याप्त धीरज रखे, तो वह संसारकी शांति और ठोस प्रगतिमें स्थायी मदद कर सकता है।

यं. इं., ११-८-'२७

सितम्बर १४

मुझे ऐसा लगता है कि भारतका मिशन – जीवन-कार्य – दूसरे देशोंसे भिन्न है। भारतमें दुनिया पर धार्मिक प्रभुता भोगनेकी क्षमता है। इस देशने स्वेच्छासे आत्मशुद्धिके लिए जो प्रयत्न किया है, उसकी मिसाल संसारमें और कहीं नहीं मिलती।

स्पी. रा. म., पृ. ४०५

सितम्बर १५

भारत भोगभूमि नहीं है; वह तो मूलतः कर्मभूमि है।

यं. इं., ५-२-'२५

सितम्बर १६

भारतने किसी भी देशके खिलाफ कभी युद्ध नहीं छेड़ा। कभी कभी उसने शुद्ध आत्मरक्षाके लिए कुसंगठित या अर्ध-संगठित विरोध जरूर किया है। इसलिए उसे शांतिकी अभिलाषाका विकास नहीं करना है। यह अभिलाषा उसके पास विपुल मात्रामें है, भले वह इस बातको जानता हो या न जानता हो।

यं. इं., ४-७-'२९

सितम्बर ९७

मैं चाहता हूँ कि भारत इस बातको समझ ले कि उसके पास एक ऐसी आत्मा है, जिसका नाश नहीं हो सकता, जो हर प्रकारकी शारीरिक कमजोरी पर विजय प्राप्त कर सकती है तथा जो सारे संसारके भौतिक संगठनका विरोध कर सकती है।

यं. इं., ११-८-'२०

सितम्बर १८

मैं पूरी नम्रतासे यह कहनेकी हिम्मत करता हूँ कि अगर भारत सत्य और अहिंसाके जरिये अपना लक्ष्य सिद्ध कर ले, तो वह विश्वशांतिकी स्थापनामें बहुत बड़ी सहायता करेगा, जिसके लिए आज दुनियाके सारे राष्ट्र तरस रहे हैं। उस स्थितिमें भारत उस सहायताका थोड़ा बदला भी चुका सकेगा, जो दुनियाके राष्ट्र स्वेच्छासे उसे देते रहे हैं।

यं. इं., १२-३-'३१

सितम्बर १९

भारतकी स्वतंत्रता संसारके शांति और युद्धसे सम्बन्धित दृष्टिकोणमें जड़मूलसे परिवर्तन कर देगी। उसकी निर्बलताका सारी मानवजाति पर बुरा असर पड़ता है।

यं. इं., १७-९-'२५

सितम्बर २०

हमारी राष्ट्रीयता दुनियाके दूसरे राष्ट्रोंके लिए खतरा नहीं बन सकती; क्योंकि जिस तरह हम किसी राष्ट्रको अपना शोषण नहीं करने देंगे, उसी तरह हम दूसरे किसी राष्ट्रका शोषण भी नहीं करेंगे। अपने स्वराज्यके जरिये हम सारी दुनियाकी सेवा करेंगे।

यं. इं., १६-४-'३१

सितम्बर २१

अगर हथियारोंके लिए आजकी पागलपनभरी दौड़ – स्पर्धा – जारी रही, तो निश्चित रूपसे उसका परिणाम ऐसे मानव-संहारमें आयेगा जैसा संसारके इतिहासमें पहले कभी नहीं हुआ। अगर कोई विजेता बचा रहा तो जिस राष्ट्रकी विजय होगी, उसके लिए वह विजय ही जीवित मृत्यु जैसी बन जायगी।

ह., १२-११-'३८

सितम्बर २२

सर्वनाशका जो खतरा दुनियाके सिर पर झूल रहा है, उससे बचनेका इसके सिवा दूसरा कोई मार्ग नहीं है कि अहिंसाकी पद्धतिको, उसमें समाये हुए सारे भव्य अर्थोंके साथ, साहसपूर्वक और बिना किसी शर्तके स्वीकार कर लिया जाय।

ह., १२-११-'३८

सितम्बर २३

अगर दुनियामें लोभ नहीं होता, तो हथियारोंके लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रह जाती। अहिंसाके सिद्धान्तका यह तकाजा है कि हम किसी भी प्रकारके शोषणसे पूरी तरह दूर रहें।

ह., १२-११-'३८

सितम्बर २४

शोषणकी भावना मिटते ही हथियारोंका विशाल संग्रह निश्चित रूपसे असह्य बोझ मालूम होने लगेगा। हथियारोंका सच्चा त्याग तब तक संभव नहीं हो सकता, जब तक दुनियाके राष्ट्र एक-दूसरेका शोषण बन्द नहीं करते।

ह., १२-११-'३८

सितम्बर २५

दुनियाके अधिक सयाने और समझदार लोग आज ऐसे पूर्ण स्वतंत्र राज्योंकी स्थापना नहीं चाहते जो एक-दूसरेसे लड़ते हैं, बल्कि ऐसे परस्परावलम्बी राज्योंका संघ स्थापित करना चाहते हैं जो एकदूसरेके मित्र हों।

यं. इं., २६-१२-'२४

सितम्बर २६

स्वावलम्बन और आत्म-निर्भरताकी तरह परस्परावलम्बन भी मनुष्यका आदर्श है और होना चाहिये। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाजके साथ आन्तर-सम्बन्ध स्थापित किये बिना वह सारे विश्वके साथ एकरूपता अनुभव नहीं कर सकता या अपने अहंकारको दबा नहीं सकता।

यं. इं., २१-३-'२९

सितम्बर २७

मनुष्यका सामाजिक परस्परावलम्बन उसे अपनी श्रद्धाकी परीक्षा करने तथा यथार्थताकी कसौटी पर खरा सिद्ध होनेकी क्षमता प्रदान करता है। अगर मनुष्य ऐसी स्थितिमें रखा गया होता अथवा अपनेको वह ऐसी स्थितिमें रख सका होता कि उसे अपने मानव-बन्धुओं पर जरा भी निर्भर न रहना पड़ता, तो वह इतना अभिमानी और इतना मदोन्मत्त हो जाता कि दुनियाके लिए सच्चे अर्थमें वह एक भार और आफत बन जाता।

यं. इं., २१-३-'२९

सितम्बर २८

समाज पर मनुष्यकी निर्भरता उसे नम्रताका पाठ सिखाती है। यह तो स्पष्ट है कि मनुष्यको अपनी अधिकतर बुनियादी जरूरतें स्वयं ही पूरी करने योग्य बनना चाहिये; लेकिन यह भी मेरे मनमें उतना ही स्पष्ट है कि जब स्वावलंबनकी वृत्तिको समाजसे बिलकुल ही अलग हो जानेकी हद तक ले जाया जाता है, तब वह लगभग पापका रूप ले लेती है।

यं. इं., २१-३-'२९

सितम्बर २९

मनुष्य जब तक राष्ट्रवादी नहीं होता तब तक उसके लिए आन्तर-राष्ट्रवादी बनना असम्भव है। आन्तर-राष्ट्रवाद तभी संभव होता है जब राष्ट्रवाद एक सत्य वस्तु बन जाता है – अर्थात् जब अलग अलग देशोंके लोग अपनेको संगठित कर लेते हैं और एक मनुष्यकी तरह कार्य करनेकी योग्यता अपनेमें पैदा कर लेते हैं।

यं. इं., १८-६-'२५

सितम्बर ३०

राष्ट्रवाद बुरी वस्तु नहीं है; बुरी वस्तु है मनकी संकुचितता, स्वार्थ और बहिष्कारकी वृत्ति – जो आधुनिक राष्ट्रोंका अभिशाप है। आज प्रत्येक राष्ट्र दूसरेको नुकसान पहुँचा कर लाभ उठाना चाहता है और दूसरेका नाश करके ऊपर उठना चाहता है।

यं. इं., १८-६-'२५

अक्तूबर १

अगर हम स्त्री और पुरुषके संबंधों पर स्वस्थ और शुद्ध दृष्टिसे विचार करें और भावी पीढ़ियोंके नैतिक कल्याणके लिए अपनेको ट्रस्टी मानें, तो आजकी मुसीबतोंके एक बड़े भागसे हम बच सकते हैं।

यं. इं., २७-९-'२८

अक्तूबर २

मनुष्य और पशुमें मुख्य भेद यह है कि मनुष्य स्वयं विवेक करने योग्य आयुको प्राप्त होता है, तभीसे सतत आत्म-संयमका जीवन बिताना शुरू करता है। ईश्वरने

मनुष्यको ऐसी क्षमता दी है, जिससे वह अपनी बहन, अपनी माँ, अपनी लड़की और अपनी पत्नीके बीच भेद कर सकता है।

वि. गां. सि., पृ. ८४

अक्तूबर ३

मानव-समाज आध्यात्मिकताकी दिशामें निरंतर विकास साधनेवाला समाज है। यदि ऐसा हो तो शरीर या इन्द्रियोंकी मांगोंके दिनोंदिन बढ़नेवाले नियंत्रण पर उसका आधार होना चाहिये। इस प्रकार विवाहको एक धार्मिक संस्कार मानना चाहिये, जो पति-पत्नी पर अनुशासनका अंकुश लगाता है और यह मर्यादा बांधता है कि वे केवल अपने बीच ही संभोग कर सकते हैं, केवल संतान पैदा करनेके लिए ही संभोग कर सकते हैं और वह भी उसी हालतमें जब दोनों वैसी इच्छा रखते हों और संतान पैदा करनेके लिए तैयार हों।

यं. इं., १६-९-'२६

अक्तूबर ४

काम-वासना, कामका आवेग, एक सुन्दर और उदात्त वस्तु है। उसमें शरमाने जैसी कोई बात नहीं है। लेकिन उसका उद्देश्य केवल संतानोत्पत्ति ही है। उसका दूसरा कोई उपयोग ईश्वरके खिलाफ और मानव-जातिके खिलाफ पाप है।

ह., २८-३-'३६

अक्तूबर ५

शुद्ध त्याग, शुद्ध ब्रह्मचर्य, एक आदर्श स्थिति है। अगर आपमें उसका विचार करनेकी हिम्मत नहीं है, तो आप खुशीसे विवाह कर लीजिये। लेकिन विवाह करने पर भी आत्म-संयमका जीवन बिताइये।

ह., ७-९-'३५

अक्तूबर ६

विवाह जीवनकी स्वाभाविक वस्तु है और उसे किसी भी अर्थमें पतनकारी या निन्दनीय समझना बिलकुल गलत है।...आदर्श यह है कि विवाहको धार्मिक संस्कार माना जाय, और इसलिए विवाहित स्थितिमें आत्म-संयमका जीवन बिताया जाय।

ह., २२-३-'४२

अक्तूबर ७

ब्रह्मचर्य केवल यांत्रिक व्रत नहीं है; उसका अर्थ है सारी इन्द्रियोंका पूर्ण संयम तथा विचार, वाणी और कार्यमें विषय-वासनासे मुक्ति। यह मार्ग आत्म-साक्षात्कार अथवा ब्रह्मकी प्राप्तिका राजमार्ग है।

यं. इं., २९-४-'२६

अक्तूबर ८

विवाहका हेतु पति-पत्नीके हृदयोंसे गन्दे काम-विकारको मिटाकर उन्हें शुद्ध बनाना और दोनोंको ईश्वरके अधिक समीप ले जाना है। पति और पत्नीके बीच काम-विकार-रहित प्रेमका होना असंभव नहीं है। मनुष्य पशु नहीं है। पशुसृष्टिमें असंख्य जन्म लेनेके बाद उसने अधिक ऊँची स्थिति प्राप्त की है। वह सीधा खड़ा होनेके लिए पैदा किया गया है, न कि पशुकी तरह चारों पाँवसे चलने या कीड़ोंकी तरह रेंगनेके लिए। मनुष्यतासे पशुता उतनी ही दूर है, जितनी आत्मासे जड़ प्रकृति दूर है।

यं. इं., २९-४-'२६

अक्तूबर ९

पत्नी पतिकी दासी नहीं है, परन्तु उसकी सहचारिणी और सहधर्मिणी है; दोनों एक-दूसरेके सुख-दुःखमें समान भाग लेनेवाले हैं और जितनी स्वतंत्रता भला-बुरा काम करनेकी पतिको है उतनी ही पत्नीको भी है।

आ. क., पृ. २३

अक्तूबर १०

आप अपनी पत्नीके सम्मानकी रक्षा करेंगे और उसके स्वामी नहीं किन्तु सच्चे मित्र बनेंगे। आप उसके शरीर और आत्माको उतना ही पवित्र समझेंगे जितना पवित्र, मेरा विश्वास है, वह आपके शरीर और आत्माको समझेगी। इस उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए आपको प्रार्थनामय परिश्रमका, सादगीका और आत्म-संयमका जीवन बिताना होगा। आपमें से कोई दूसरेको काम-वासनाकी तृप्तिका साधन न समझे।

यं. इं., २-२-'२८

अक्तूबर ११

जिस प्रकार पुरुष और स्त्री बुनियादी तौर पर एक हैं, उसी प्रकार उनकी समस्या भी मूलमें एक ही होनी चाहिये। दोनोंके भीतर वही आत्मा है। दोनों एक ही प्रकारका जीवन बिताते हैं। दोनोंकी भावनायें भी एकसी ही हैं। दोनों एक-दूसरेके पूरक हैं। दोनों एक-दूसरेकी सक्रिय सहायताके बिना जी ही नहीं सकते।

ह., २४-२-'४०

अक्तूबर १२

परन्तु किसी न किसी प्रकार पुरुषने स्त्री पर अपनी सत्ता युगोंसे जमा रखी है। इसलिए स्त्रीमें हीनताका भाव विकसित हो गया है। उसने पुरुषकी इस स्वार्थपूर्ण शिक्षाकी सत्यतामें विश्वास कर लिया है कि स्त्री पुरुषसे हीन है, घटिया है। लेकिन मनुष्योंमें जो लोग द्रष्टा थे, दीर्घदृष्टि रखनेवाले थे, उन्होंने स्त्रीके दरजेको पुरुषके समान ही माना है।

ह., २४-२-'४०

अक्तूबर १३

परन्तु इसमें कोई शक नहीं कि किसी एक बिन्दु पर पहुँचकर स्त्री-पुरुष दोनोंके कामका बँटवारा हो जाता है। दोनों मूलत: एक ही हैं, परन्तु यह भी उतना ही सच है कि दोनोंकी रचनामें महत्त्वपूर्ण भेद है। इसलिए दोनोंके कार्य, दोनोंके धंधे, भी अलग अलग होने चाहिये। माताका कर्तव्य पालनके लिए, जिसका स्त्रियोंकी विशाल संख्या सदा ही पालन करेगी, स्त्रीमें जिन गुणोंका होना जरूरी है, वे गुण पुरुषमें हों यह जरूरी नहीं है। स्त्री स्वभावसे स्थितिशील है; पुरुष गतिशील है। स्त्री मुख्यतः घरकी स्वामिनी है। पुरुष रोटी कमानेवाला है। स्त्री रोटीको संभाल कर रखनेवाली और उसका बँटवारा करनेवाली है। वह हर अर्थमें घरकी, परिवारकी, संरक्षिका है।

ह., २४-२-'४०

अक्तूबर १४

स्त्री पुरुषकी जीवन-संगिनी है; उसमें वैसी ही मानसिक शक्तियाँ हैं जैसी पुरुषमें हैं। उसे पुरुषकी प्रवृत्तियोंसे सम्बन्ध रखनेवाली सूक्ष्मसे सूक्ष्म बातमें भी भाग लेनेका अधिकार है और पुरुषके साथ स्वाधीनता तथा स्वतंत्रताके उपभोगका समान अधिकार है।

स्पी. रा. म., पृ. ४२५

अक्तूबर १५

मेरे विचारसे मनुष्यने जिन जिन बुराइयोंके लिए अपनेको जिम्मेदार बनाया है, उन सबमें एक भी इतनी नीचे गिरानेवाली, मनको आघात पहुँचनेवाली और निर्दयतापूर्ण नहीं है जितना मानवजातिके श्रेष्ठ अर्द्धांका – स्त्रीजातिका, अबला जातिका नहीं – उसके द्वारा होनेवाला दुरुपयोग है। स्त्रीजाति पुरुष-जातिसे अधिक उदात्त और अधिक ऊँची है; क्योंकि वह आज भी त्यागकी, मूक कष्ट-सहनकी, नम्रताकी, श्रद्धाकी और ज्ञानकी जीवित मूर्ति है।

यं. इं., १५-९-'२१

अक्तूबर १६

मेरा मत है कि स्त्री आत्म-बलिदानकी मूर्ति है। लेकिन दुर्भाग्यसे आज वह अपने इस जबरदस्त लाभको नहीं समझती, जो पुरुषको प्राप्त नहीं है। जैसा कि टॉल्स्टॉय कहा करते थे, स्त्रियाँ पुरुषके जादुई प्रभावका शिकार बनी हुई हैं। अगर वे अहिंसाकी शक्तिको पहचान लें, तो वे अबला कहलाना स्वीकार नहीं करेंगी।

यं. इं., १४-१-'३२

अक्तूबर १७

पुरुषने स्त्रीको अपनी कठपुतली मान लिया है। स्त्रीने उसकी कठपुतली बनना सीख लिया है, और अन्तमें अनुभवसे यह पाया है कि ऐसा बननेमें ही सुविधा और आराम

है। क्योंकि जब एक व्यक्ति अपने पतनमें दूसरेको खींचता है, तो नीचे गिरना ज्यादा आसान हो जाता है।

ह., २५-१-'३६

अक्तूबर १८

स्त्रीको चाहिये कि वह अपनेको पुरुषके काम-विकारकी तृप्तिका साधन मानना बन्द कर दे। इसका उपाय पुरुषसे अधिक स्त्रीके हाथमें है। उसे पुरुषोंके लिए, यहाँ तक कि अपने पतिके लिए भी, सजने-धजनेसे इनकार कर देना चाहिये, अगर वह समानताके आधार पर परुषकी जीवन-संगिनी बनना चाहती है। मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता कि सीताने कभी अपने शारीरिक सौंदर्यसे रामको प्रसन्न करनेमें एक क्षणका भी समय बिगाड़ा होगा।

यं. इं., २१-७-'२१

अक्तूबर १९

स्त्रियाँ जीवनमें जो कुछ पवित्र और धार्मिक है, उसकी विशेष संरक्षिकायें हैं। स्वभावसे रक्षणशील होनेके कारण जिस प्रकार वे अन्धविश्वासपूर्ण आदतोंको धीरे धीरे छोड़ती हैं, उसी प्रकार जीवनमें जो कुछ पवित्र और उदात्त है उसे भी वे जल्दी नहीं छोड़तीं।

ह., २५-३-'३३

अक्तूबर २०

स्त्री अहिंसाका अवतार है। अहिंसाका अर्थ है असीम और अनंत प्रेम; दूसरे शब्दोंमें इसका अर्थ है कष्ट सहनेकी अपार क्षमता। स्त्रीके सिवा, जो पुरुषकी माता है, यह क्षमता अधिक से अधिक मात्रामें कौन दिखाता है? शिशुको नौ महीने तक अपने गर्भमें रखने तथा उसका पोषण करनेमें वह अपनी यह क्षमता प्रकट करती है और इसके लिए उसे जो कष्ट भोगने पड़ते हैं उसमें आनन्द मानती है। प्रसवकी जो पीड़ा वह भोगती है, उससे अधिक

बड़ी पीड़ा दूसरी क्या हो सकती है? लेकिन शिशुजन्मके आनन्दमें वह इस पीड़ाको भूल जाती है। फिर, उसके बालकको पाल-पोसकर दिन-दिन बड़ा करनेके लिए प्रतिदिन कौन कष्ट उठाता है? अपने इस प्रेमका दायरा उसे सारी मानव-जाति तक फैलाना चाहिये; उसे यह भूल जाना चाहिये कि वह पुरुषकी काम-वासनाकी पूर्तिका साधन थी या हो सकती है। तब वह पुरुषकी माता, पुरुषकी निर्मात्री और पुरुषकी मूक मार्गदर्शिकाके रूपमें पुरुषके साथ अपना गौरवपूर्ण पद प्राप्त करेगी। शांतिके अमृतकी प्यासी युद्धरत दुनियाको शांतिकी कला सिखानेकी क्षमता भगवानने उसीको प्रदान की है।

ह., २४-२-'४०

अक्तूबर २१

पुरुषके लिए स्त्री-जन्म पानेकी कामना करनेके पीछे जितना कारण है, उतना ही स्त्रीके लिए पुरुष-जन्मकी कामना करनेके पीछे भी है। लेकिन यह कामना व्यर्थ है। हम जिस स्थितिमें पैदा हुए हों उसीमें सुख मानें और प्रकृतिने हमारा जो धर्म नियत कर दिया है उसीका पालन करें।

ह., २४-२-'४०

अक्तूबर २२

शीलकी पवित्रता बाहरी प्रयत्नोंसे पनपनेवाली चीज नहीं है। उसकी रक्षा आसपास घिरी हुई परदेकी दीवालसे नहीं की जा सकती। यह पवित्रता भीतरसे पैदा होनी चाहिये; और उसका तभी कोई मूल्य हो सकता है जब वह अनखोजे प्रलोभनका विरोध करनेकी शक्ति रखती हो।

यं. इं., ३-१२-'२७

अक्तूबर २३

लेकिन स्त्रीकी पवित्रताके बारेमें दूषित मनोवृत्तिका परिचय देनेवाली यह सारी चिन्ता किसीलिए है? क्या पुरुषकी पवित्रताके विषयमें स्त्रियोंको कुछ कहनेका मौका

मिलता है? पुरुषकी पवित्रताके बारेमें स्त्रियोंकी चिन्ताकी बात हम कभी नहीं सुनते। पुरुषोंको स्त्रीकी पवित्रताके नियमनका अधिकार अपने हाथमें क्यों लेना चाहिये? वह पवित्रता बाहरसे नहीं लादी जा सकती। वह ऐसी वस्तु है जिसका विकास भीतरसे होता है और जिसके लिए व्यक्तिको स्वयं ही प्रयत्न करना होता है।

यं. इं., २५-११-१२६

अक्तूबर २४

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जो निडर स्त्री यह जानती है कि उसकी पवित्रता उसकी मजबूतसे मजबूत ढाल है, उसकी आबरू कभी लूटी नहीं जा सकती। पुरुष कितना भी लम्पट क्यों न हो, स्त्रीकी उज्जवल पवित्रताकी ज्योतिके सामने वह शरमसे अवश्य झुक जायगा।

ह., १-३-'४२

अक्तूबर २५

स्त्रीकी रक्षा करना पुरुषका विशेषाधिकार होना चाहिये। परन्तु पुरुषकी अनुपरिस्थितिमें या पुरुषके स्त्री-रक्षाका पवित्र कर्तव्य न पालने पर भारतकी किसी भी स्त्रीको असहाय महसूस नहीं करना चाहिये। जो स्त्री या पुरुष मरनेकी कला जानता है, उसे अपने सम्मानको किसी भी प्रकारकी हानि पहुँचनेका डर कभी नहीं रखना चाहिये।

यं. इं., १५-१२-'२१

अक्तूबर २६

मनुष्यको दोमें से कोई एक मार्ग चुन लेना चाहिये – एक मार्ग ऊपर उठानेवाला है और दूसरा नीचे गिरानेवाला। परन्तु चूंकि उसके भीतर पशुका वास है, वह ऊपर उठानेवाले मार्गके बजाय नीचे गिरानेवाला मार्ग ज्यादा आसानीसे चुनेगा – खास तौर पर उस स्थितिमें जब नीचे गिरानेवाला मार्ग सुन्दर और आकर्षक रूपमें उसके सामने पेश

किया जाय। जब पापको सद्गुणका बाना पहनाकर मनुष्यके सामने प्रस्तुत किया जाता है, तब वह आसानीसे पापके सामने झुक जाता है |

ह., २१-१-'३५

अक्तूबर २७

अपने कर्मोंके परिणामोंसे बचनेका प्रयत्न करना गलत और अनैतिक बात है। जो आदमी जरूरतसे ज्यादा खाता है, उसके लिए यह अच्छा है कि उसके पेटमें दर्द हो और उसे उपवास करना पड़े | जरूरतसे ज्यादा खाना और फिर शक्तिवर्धक या दूसरी दवाई लेकर अधिक खानेके परिणामोंसे बचना बुरी बात है। यह और भी ज्यादा बुरा है कि कोई व्यक्ति मनमाना विषय-भोग करे और बादमें अपने इस कामके परिणामोंसे बचे।

यं. इं., १२-३-'२५

अक्तूबर २८

कुदरत बड़ी कठोर है और अपने कानूनोंके ऐसे किसी भंगके लिए वह पूरा बदला लेगी। नैतिक परिणाम केवल नैतिक नियंत्रणोंसे ही उत्पन्न किये जा सकते हैं। दूसरे सारे नियंत्रण उस हेतुको ही खतम कर देते हैं, जिसके लिए वे लगाये जाते हैं।

यं. इं., १२-३-'२५

अक्तूबर २९

जगत अपने अस्तित्वके लिए प्रजननकी क्रिया पर निर्भर करता है। यह संसार ईश्वरकी लीलाका स्थान है, उसकी महिमाका प्रतिबिम्ब है। संसारकी सुव्यवस्थित वृद्धिके लिए ही रतिक्रियाका निर्माण हुआ है, ऐसा समझनेवाला व्यक्ति बड़ेसे बड़ा प्रयत्न करके भी विषय-वासनाको रोकेगा।

आ. क., पृ. १८६

अक्तूबर ३०

काम-वासनाकी विजय किसी पुरुष या स्त्रीके जीवनका सबसे ऊँचा पुरुषार्थ है। काम-वासना पर विजय प्राप्त किये बिना मनुष्य अपने पर शासन करनेकी आशा नहीं रख सकता।...और आत्मशासनके बिना स्वराज्य या राम-राज्यकी स्थापना नहीं हो सकती। आत्म-शासनके अभावमें सारे जगतका शासन भी रंगे हुए नकली आमकी तरह धोखेमें डालनेवाला और निराशा पैदा करनेवाला ही सिद्ध होगा। नकली आम बाहरसे देखनेमें तो आकर्षक मालूम होता है, लेकिन अन्दरसे खोखला और खाली होता है।

ह., २१-११-'३६

अक्तूबर ३१

विवाह जिस आदर्श तक पहुँचानेका लक्ष्य सामने रखता है, वह है शरीरोंके संयोग द्वारा आत्माका संयोग साधना। विवाह जिस मानवप्रेमको मूर्तरूप प्रदान करता है, उसे दिव्य प्रेम अथवा विश्वप्रेमकी दिशामें आगे बढ़नेकी सीढ़ी बन जाना चाहिये।

यं. इं., २१-५-'३१

नवम्बर १

मनुष्यका यह कर्तव्य नहीं है कि वह अपनी सारी मानसिक शक्तियोंका पूर्णता तक विकास करे। उसका कर्तव्य यह है कि ईश्वरकी दिशामें ले जानेवाली अपनी सारी शक्तियोंका वह पूर्णता तक विकास करे और जो शक्तियाँ उसे ईश्वर-विमुख बनायें उनका पूरी तरह दमन करे।

यं. इं., २४-६-'२६

नवम्बर २

मनुष्य न तो केवल बुद्धि है, न केवल स्थूल शरीर है और न केवल हृदय अथवा आत्मा है। सम्पूर्ण मानवके निर्माणके लिए इन तीनोंका यथायोग्य और सुन्दर समन्वय होना आवश्यक है; इसीमें शिक्षाका सच्चा अर्थशास्त्र समाया हुआ है।

ह., ११-९-'३७

नवम्बर ३

मेरा यह मत है कि बुद्धिका सच्चा शिक्षण, सच्चा विकास तभी हो सकता है जब शरीरके अवयवोंको – यानी हाथ, पैर, आँख, कान, नाक आदिको – सही ढंगकी कसरत और तालीम मिले। दूसरे शब्दोंमें, बालकके हाथ-पैर, आँख, कान आदिका ज्ञानपूर्वक उपयोग किया जाय, तो उसकी बुद्धिका उत्तम और अतिशीघ्र विकास होता है।

ह., ८-३-'३७

नवम्बर ४

लेकिन जब तक मन और शरीरका विकास साथ साथ नहीं होता और उसीके साथ आत्माका भी विकास और जागृति नहीं होती, तब तक केवल बुद्धिका विकास एकतरफा और अधूरा सिद्ध होगा। आध्यात्मिक शिक्षासे मेरा मतलब है हृदयकी शिक्षा। इसलिए बुद्धिका उचित और सर्वांगीण विकास केवल उसी स्थितिमें हो सकता है, जब वह बालककी

शारीरिक और आध्यात्मिक शक्तियोंके विकासके साथ आगे बढ़े। तीनों शक्तियोंका विकास एक अखंड और अविभाज्य वस्तु है।

ह., १७-४-'३७

नवम्बर ५

शिक्षाकी मेरी योजनामें हाथ अक्षरोंकी आकृति खींचने या अक्षर लिखनेके पहले औजार चलायेगा। बालककी आँखें जैसे जीवनमें दूसरी चीजें देखेंगी, उसी तरह वे अक्षरों और शब्दोंके चित्र देखेंगी और पढ़ेंगी; कान वस्तुओंके नाम और वाक्योंके अर्थ सुनेंगे और उन्हें पकड़ेंगे। सारी तालीम स्वाभाविक और रसप्रद होगी और इसलिए दुनियामें सबसे सस्ती तथा अधिकसे अधिक तेज गतिवाली होगी।

ह., २८-८-'३७

नवम्बर ६

अक्षर-ज्ञानकी शिक्षा हाथकी शिक्षाके पीछे चलनी चाहिये। हाथ मनुष्यको प्राप्त हुई ईश्वरकी ऐसी देन है, जो स्पष्ट रूपमें उसे पशुसे अलग करती है। यह सोचना निरा भ्रम है कि पढ़ने और लिखनेकी कलाके ज्ञानके अभावमें मानवका पूर्णतम विकास कभी हो ही नहीं सकता। बेशक वह ज्ञान जीवनकी शोभाको बढ़ाता है, लेकिन वह मानवकी नैतिक, शारीरिक या भौतिक उन्नतिके लिए किसी भी तरह अनिवार्य नहीं है।

ह., ८-३-'३५

नवम्बर ७

शिक्षामें हाथ-उद्योगको दाखिल करनेसे हमारे भारत जैसे गरीब देशमें दुहरा हेतु सिद्ध होगा। उससे हमारे बालकोंकी शिक्षाका खर्च निकलेगा और उन्हें एक ऐसा धन्धा सीखनेको मिलेगा, जिसका वे चाहें तो बादके जीवनमें अपने गुजारेके लिए आधार ले सकते हैं। ऐसी शिक्षा-पद्धति हमारे बालकोंको अवश्य ही स्वावलम्बी बनायेगी। हम शरीर-श्रमसे

नफरत करना सीखेंगे, तो उससे हमारे राष्ट्रका जितना नैतिक पतन होगा उतना और किसी बातसे नहीं होगा।

यं. इं., १-९-'२६

नवम्बर ८

हमारे देशमें विदेशी शासनने जो अनेक बुराईयाँ पैदा की है, उनमें देशके नौजवानों पर हानिकारक विदेशी माध्यम लादनेकी जो बुराई है, उसे इतिहास बड़ीसे बड़ी बुराइयोंमें से एक मानेगा। इस माध्यमने राष्ट्रकी शक्तिको चूस कर उसे कमजोर बना दिया है; इसने विद्यार्थियोंके जीवनको घटा दिया है। इस माध्यमने विद्यार्थियोंको आम जनतासे अलग कर दिया है और शिक्षाको अकारण महँगा बना दिया है। अगर यह प्रक्रिया आगे भी चालू रहेगी, तो इस बातकी बहुत बड़ी संभावना है कि हमारा राष्ट्र अपनी आत्माको खो देगा।

यं. इं., ५-७-'२८

नवम्बर ९

अगर हमें इस दुनियामें सच्ची शांति प्राप्त करनी है और अगर हमें युद्धेके खिलाफ सच्चा युद्ध लड़ना है, तो हमें बालकोंसे इसका आरम्भ करना होगा; और अगर बालक अपनी स्वाभाविक निर्दोषतामें बड़े होंगे, तो हमें संघर्ष नहीं करना पड़ेगा; हमें निष्फल और निरर्थक प्रस्ताव पास नहीं करने पड़ेंगे। परन्तु हम प्रेमसे अधिक प्रेमकी ओर तथा शांतिसे अधिक शांतिकी ओर बढ़ेंगे – यहाँ तक कि अन्तमें दुनियाके चारों कोने उस प्रेम और उस शांतिसे भर जायँगे, जिसके लिए आज सारी दुनिया जाने या अनजाने तरस और तड़प रही है।

यं. इं., १९-११-'३१

नवम्बर १०

सच्ची शिक्षा वह है जो हमारे भीतरके उत्तम तत्त्वोंको बाहर लाकर प्रकट करती है। मानवताकी पुस्तकसे बढ़कर दूसरी कौनसी पुस्तक हो सकती है?

ह., ३०-३-'३४

नवम्बर ११

राष्ट्र-निर्माणका कोई भी कार्यक्रम राष्ट्रके किसी भी भागको अछूता नहीं रख सकता। विद्यार्थियोंको देशके लाखों मूक मानवों पर असर डालना होगा। उन्हें प्रान्त, नगर, वर्ग या जातिकी दृष्टिसे नहीं, बल्कि एक महाद्वीप और लाखों-करोड़ों लोगोंकी दृष्टिसे विचार करना सीखना होगा। इनमें अछूत, शराबी, गुंडे और वेश्यायें भी शामिल हैं - हमारे बीच जिनके अस्तित्वके लिए हममें से हरएक व्यक्ति जिम्मेदार है।

यं. इं., ९-६-'२७

नवम्बर १२

प्राचीन कालमें हमारे विद्यार्थी ब्रह्मचारी – अर्थात् ईश्वरके मार्ग पर और ईश्वरसे डर कर चलनेवाले – कहे जाते थे। राजा-महाराजा और समाजके बड़े-बूढ़े उनका सम्मान करते थे। राष्ट्र स्वेच्छासे उनके पालन-पोषणकी जिम्मेदारी अपने सिर लेता था और वे लोग बदलेमें राष्ट्रको सौगुनी बलवती आत्माएँ, सौगुने शक्तिशाली मस्तिष्क और सौगुनी बलवती भुजायें अर्पण करते थे।

यं. इं., ९-६-'२७

नवम्बर १३

समग्र सच्ची कला आत्माकी अभिव्यक्ति है। बाहरी रूपोंका केवल इतना ही मूल्य है कि वे मनुष्यकी आन्तरिक भावनाको अभिव्यक्त करते हैं।

यं. इं., १३-११-'२४

नवम्बर १४

जब मैं ऊपर असंख्य चमकते तारोंसे भरे आकाशको देखता हूँ तब जो सुन्दर और भव्य कुदरती दृश्य मेरी आँखोंके सामने खुलते हैं, वैसे दृश्य मनुष्य द्वारा निर्माण की हुई कौनसी कला मेरे सामने प्रस्तुत कर सकती है? परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि मैं सामान्यत: इस रूपमें मान्य की जानेवाली कलाकृतियोंके मूल्य और महत्त्वको स्वीकार नहीं करता;

इसका अर्थ इतना ही है कि ये कलाकृतियाँ व्यक्तिगत रूपमें मुझे प्राकृतिक सौन्दर्यके शाश्वत प्रतीकोंकी तुलनामें अत्यन्त अधूरी मालूम होती हैं। मनुष्यकी इन कलाकृतियोंका उसी हद तक मूल्य है जिस हद तक कि वे मनुष्यको आत्म-साक्षात्कारकी दिशामें आगे बढ़नेमें सहायता करती हैं।

यं. इं., १३-११-'२४

नवम्बर १५

सच्चे कलाकारकी दृष्टिमें केवल वही चेहरा सुन्दर है जो, अपने बाहरी रूपसे बिलकुल अलग, आत्मामें बसे हुए सत्यकी ज्योतिसे चमकता है। सत्यसे अलग कोई सौन्दर्य नहीं है। दूसरी ओर, सत्य ऐसे स्वरूपोंमें अपनेको प्रकट कर सकता है, जो बाहरसे देखनेमें जरा भी सुन्दर न हों।

यं. इं., १३-११-'२४

नवम्बर १६

मैं सत्यमें या सत्यके द्वारा सौन्दर्यको देखता और अनुभव करता हूँ। समग्र सत्य – न केवल सत्यमय विचार किन्तु सत्यमय चेहरे, सत्यमय चित्र या सत्यमय गीत उच्च कोटिका सौन्दर्य रखते हैं। लोग सामान्यतः सत्यमें सौन्दर्यका दर्शन नहीं कर पाते; सामान्य मनुष्य सत्यमें निहित सौन्दर्यसे दूर भागता है और उसकी ओर ध्यान नहीं देता। सच्ची कलाका जन्म तभी होगा जब मनुष्य सत्यमें सौन्दर्यको देखने लगेंगे।

यं. इं., १३-११-'२४

नवम्बर १७

जब मैं सूर्यास्तके अनुपम सौंदर्यकी अथवा चन्द्रमाकी अनोखी शोभाकी प्रशंसा करता हूँ, तब मेरी आत्मा सरजनहार प्रभुकी पूजामें तल्लीन हो जाती है। इन सारे सर्जनोंमें मैं उस प्रभुको और उसकी दयाको देखनेका प्रयत्न करता हूँ। परन्तु ये सूर्यास्त और सूर्योदय भी केवल बाधक बन जायँगे, यदि वे उस प्रभुका विचार करनेमें मेरी मदद न करें। ऐसी

कोई भी वस्तु, जो आत्माकी उड़ानमें बाधक बनती है, माया और भ्रमजाल है - उस शरीरकी तरह जो सचमुच मोक्षप्राप्तिके आपके मार्गमें अकसर बाधक बनता है।

यं. इं., १३-११-'२४

नवम्बर १८

जीवन समग्र कलासे भी अधिक महान है। मैं इससे भी आगे बढ़कर यह घोषणा करूँगा कि जिस मनुष्यका जीवन पूर्णताके निकटसे निकट पहुँचता है वह सर्वोच्च कलाकार है; क्योंकि उच्च और उदात्त जीवनकी निश्चित बुनियाद और आधारके अभावमें कलाका क्या मूल्य है?

ले. गां., पृ. २१०

नवम्बर १९

अन्तमें सच्ची कला उन जड़ मशीनोंके जरिये अभिव्यक्त नहीं की जा सकती, जो भाप और बिजलीकी शक्तिसे चलती हैं और विशाल पैमाने पर माल तैयार करनेके लिए बनाई गई हैं; सच्ची कला तो केवल स्त्री-पुरुषोंके हाथोंके कोमल और प्राणवान स्पर्शके द्वारा ही अभिव्यक्त हो सकती है।

यं. इं., १४-३-'२९

नवम्बर २०

सच्ची कला केवल आकारकी ओर ध्यान नहीं देती, बल्कि उसके पीछे जो कुछ होता है उस पर भी ध्यान देती है। एक कला ऐसी होती है जो मनुष्यको जीवन देती है और दूसरी कला ऐसी होती है जो उसे मारती है। सच्ची कला अपने सर्जकोंके सुख, सन्तोष और शुद्धिका प्रमाण होनी चाहिये।

यं. इं., ११-८-'२१

नवम्बर २१

जीवनकी शुद्धि सबसे ऊँची और सबसे सच्ची कला है। तालीम पाई हुई आवाजसे मधुर संगीतको जन्म देनेकी कला तो अनेक लोग सिद्ध कर सकते हैं, परन्तु शुद्ध जीवनके स्वरोंके सुमेलसे मधुर संगीतको जन्म देनेकी कला बिरले ही लोग सिद्ध कर सकते है।

ह., १९-२-'३८

नवम्बर २२

जो संस्कृति सबसे अलग-थलग रहनेका प्रयत्न करती है वह जी नहीं सकती। आज भारतमें शुद्ध आर्य-संस्कृति जैसी कोई संस्कृति अस्तित्वमें नहीं है। आर्य लोग भारतके मूल निवासी थे या बाहरसे भारतमें आनेवाले अवांछनीय लोग थे, इस प्रश्नमें मेरी बहुत दिलचस्पी नहीं है। मेरी दिलचस्पी तो इस सत्यमें है कि मेरे अति प्राचीन कालके पूर्वज अधिकसे अधिक स्वतंत्रतासे एक-दूसरेके साथ घुलमिल गये थे और वर्तमान पीढ़ीके हम लोग उस सुमेलके ही परिणाम हैं। यह तो केवल भविष्य ही बतायेगा कि हम अपनी जन्मभूमिकी और हमें धारण करनेवाली इस छोटीसी पृथ्वीकी कोई सेवा कर रहे हैं या उस पर बोझ बन कर जी रहे हैं।

ह., ९-५-'३६

नवम्बर २३

'प्राचीन' के नामसे पहचानी जानेवाली हर वस्तुकी मैं बिना सोचे-विचारे अन्धपूजा नहीं करता। जो कुछ बुरा है या नीतिकी दृष्टिसे नीचे गिरानेवाला है, उसके नाशका प्रयत्न करनेमें मैं कभी हिचकिचाया नहीं, भले वह कितना ही प्राचीन क्यों न हो। लेकिन इस एक अपवादके साथ मुझे आपके सामने स्वीकार करना चाहिये कि मैं प्राचीन संस्थाओंका प्रशंसक और पूजक हूँ और यह सोचकर मुझे दुःख होता है कि लोग हर आधुनिक वस्तुके पीछे पागलोंकी तरह तेजीसे दौड़नेकी धुनमें अपनी सारी प्राचीन परम्पराओंसे नफरत करते हैं और अपने जीवनमें उनकी उपेक्षा करते हैं।

वि. गां. सि., पृ. १०५

नवम्बर २४

हमें इसका निर्णय करना होगा कि क्या हम बिना सोचे-विचारे इस (आधुनिक सभ्यताकी नकल करेंगे। पश्चिमसे समय समय पर जो भयंकर बातें हमारे पास तक पहुँचती हैं, उन्हें देखते हुए अच्छा होगा कि हम कुछ देर के लिए रुकें और अपने आपसे यह पूछें: 'क्या सब-कुछ जाननेके बाद यह अधिक लाभप्रद नहीं है कि हम अपनी ही सभ्यताको पकड़े रहें और जो तुलनात्मक ज्ञान हमें प्राप्त है उसके प्रकाशमें अपनी सभ्यताके जाने हुए दोषोंको दूर करके उसे सुधारनेका प्रयत्न करें?

यं. इं., २-६-'२७

नवम्बर २५

इन दो सभ्यताओंके गुण-दोषोंकी तुलना करना निरर्थक न हो तो भी शायद अनावश्यक है। संभव है पश्चिमने अपने जलवायु और वातावरणके अनुकूल सभ्यताका विकास किया हो और उसी तरह अपनी परिस्थितियोंके अनुकूल सभ्यताका हमने विकास किया हो और दोनों अपने अपने क्षेत्रमें अच्छी और लाभदायी हों।

यं. इं., २-६-'२७

नवम्बर २६

शांतिकी तालीमसे अकसर पैदा होनेवाली कायरतासे तथा पीढ़ियोंसे चले आ रहे नियंत्रणके कारण पैदा होनेवाली गुलामीसे हमें किसी न किसी तरह बचना होगा, यदि प्राचीन सभ्यताको आधुनिकताके पागलपनभरे आक्रमणके सामने नष्ट नहीं होना है।

यं. इं., २-६-'२७

नवम्बर २७

आधुनिक सभ्यताका विशिष्ट लक्षण मानवकी जरूरतोंको बिना किसी मर्यादाके बढ़ाते जाना है। प्राचीन सभ्यताका लक्षण इन जरूरतों पर आवश्यक मर्यादा लगाना और इनका कठोर नियमन करना है।

यं. इं., २-६-'२७

नवम्बर २८

आजका या पश्चिमका असन्तोष वस्तुतः परलोकमें और इसलिए ईश्वरमें जीवित श्रद्धा न होनेके कारण पैदा होता है। प्राचीन अथवा पूर्वी सभ्यताका संयम, अकसर हमारे न चाहने पर भी, परलोकमें और इश्वरीय शक्तिमें हमारी श्रद्धासे पैदा होता है।

यं. इं., २-६-'२७

नवम्बर २९

आधुनिक आविष्कारोंके कुछ तात्कालिक और भव्य परिणाम मनुष्यको पागल बना देनेवाले हैं; उनके प्रलोभनको वह रोक नहीं सकता। लेकिन मेरा यह निश्चित मत है कि ऐसे प्रलोभनोंका विरोध करनेमें ही मनुष्यकी विजय है। आज हमारे सामने यह खतरा है कि हम क्षणिक सुखके लिए स्थायी कल्याणका त्याग कर रहे हैं।

यं. इं., २-६-'२७

नवम्बर ३०

मैं अपने मकानको चारों ओर दीवालें खड़ी करके बन्द नहीं करना चाहता और न मेरी खिड़कियोंको ही बन्द करना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि समस्त देशोंकी संस्कृतियाँ मेरे मकानके आसपास अधिकसे अधिक स्वतंत्रतासे अपना प्रभाव फैलाती रहें। लेकिन मैं किसी संस्कृतिके प्रभावमें आकर अपनी संस्कृतिका आधार छोड़नेसे इनकार करता हूँ। मैं दूसरे लोगोंके घरोंमें अनधिकारी व्यक्तिके रूपमें, भिखारीके रूपमें या गुलामके रूपमें रहनेसे इनकार करता हूँ।

यं. इं., १-६-'२१

दिसम्बर १

लोकतंत्रका सारभूत अर्थ वह कला और वह विज्ञान होना चाहिये, जो राष्ट्रकी प्रजाके समस्त वर्गोंकी सम्पूर्ण शारीरिक, आर्थिक तथा आध्यात्मिक साधन-सम्पत्तिका उपयोग सब लोगोंके समान कल्याणकी सिद्धिमें करते हैं।

ह., २७-५-'३९

दिसम्बर २

जन्मजात लोकतंत्रवादी जन्मसे ही अनुशासन पालनेवाला होता है। लोकतंत्रकी भावना कुदरती तौर पर उसीमें विकसित होती है, जो सामान्यत: समस्त मानवीय अथवा ईश्वरीय कानूनोंको स्वेच्छासे पालनेका आदि हो जाता है।

ह., २७-५-'३९

दिसम्बर ३

सम्पूर्ण समाजके भलेके लिए स्वेच्छापूर्वक सामाजिक मर्यादाओंको स्वीकार करनेसे व्यक्ति और समाज – जिसका व्यक्ति एक सदस्य है – दोनोंकी उन्नति होती है और दोनोंका जीवन समृद्ध बनता है।

ह., २७-५-'३९

दिसम्बर ४

लोकतंत्रकी भावना कोई यांत्रिक वस्तु नहीं है, जिसका विकास (शासनके बाहरी) रूपोंका अंत करनेसे हो जाय। उसके लिए हृदय-परिवर्तन आवश्यक होता है।

यं. इं., १६-३-'२७

दिसम्बर ५

आतंक और त्रासके बीच – भले उसका कारण सरकार हो या जनता – किसी देशमें लोकतंत्रकी भावना स्थापित नहीं की जा सकती। कुछ बातोंमें प्रजाकीय आतंकवाद

सरकारी आतंकवादकी अपेक्षा लोकतंत्रकी भावनाके विकासमें अधिक रुकावट डालता है; क्योंकि सरकारी आतंकवाद लोकतंत्रकी भावनाको मजबूत बनाता है, जब कि प्रजाकीय आतंकवाद उस भावनाको मार देता है।

यं. इं., २३-२-'२१

दिसम्बर ६

अनुशासनबद्ध और जाग्रत लोकतंत्र संसारकी सुन्दरसे सुन्दर वस्तु है। पूर्वग्रहोंसे जकड़ा हुआ, अज्ञानमें फँसा हुआ तथा अन्धविश्वासोंका शिकार बना हुआ लोकतंत्र अराजकता और अन्धाधुन्धीके दलदलमें फँस जायगा और खुद ही अपना नाश कर लेगा।

यं. इं., ३०-७-'३१

दिसम्बर ७

मेरी कल्पनाके लोकतंत्रका पशुबलके उपयोगके साथ बिलकुल मेल नहीं बैठता। अपनी इच्छाका पालन करानेके लिए वह कभी पशुबलका उपयोग नहीं करेगा।

ए. फा., पृ. १०२

दिसम्बर ८

बाहरी नियंत्रणोंक तनावसे लोकतंत्र टूट जायगा। वह केवल विश्वासके बल पर ही टिक सकता है।

दि. डा., पृ. १३६

दिसम्बर ९

स्वतंत्रताके सर्वोच्च रूपके साथ बड़ेसे बड़ा अनुशासन और नम्रता जुड़ी होती है। जो स्वतंत्रता अनुशासन और नम्रतासे आती है, उससे इनकार नहीं किया जा सकता। निरंकुश स्वच्छन्दता अशिष्टता और असभ्यताकी निशानी है, जो हमें भी नुकसान पहुँचाती है और हमारे पड़ोसियोंको भी नुकसान पहुँचाती है।

यं. इं., ३-६-'२६

दिसम्बर १०

जब लोगोंके हाथमें राजनीतिक सत्ता आ जाती है, उस समय उनकी स्वतंत्रतामें हस्तक्षेप कमसे कम हो जाता है। दूसरे शब्दोंमें, जो राष्ट्र राज्यके ऐसे हस्तक्षेपके बिना अपना कारबार सुचारु रूपसे और असरकारक ढँगसे चलाता है, वह सच्चे अर्थमें लोकतांत्रिक राष्ट्र है। जब ऐसी स्थिति नहीं होती तब सरकारका रूप केवल नामके लिए ही लोकतांत्रिक होता है।

ह., ११-१-'३६

दिसम्बर ११

लोकतंत्र और हिंसा कभी एकसाथ चल ही नहीं सकते। जो राज्य आज केवल नामके लिए ही लोकतांत्रिक हैं, उन्हें या तो खुले तौर पर सर्वसत्ताधारी राज्य बन जाना चाहिये; अथवा यदि वे सच्चे अर्थमें लोकतांत्रिक बनना चाहें, तो हिम्मतके साथ उन्हें अहिंसक बन जाना चाहिये। यह कहना बिलकुल गलत है कि केवल व्यक्ति ही अहिंसाका आचरण कर सकते हैं, राष्ट्र कभी नहीं – जो व्यक्तियोंके ही बने होते हैं।

ह., १२-११-'३८

दिसम्बर १२

वही मनुष्य सच्चा लोकतंत्रवादी है, जो शुद्ध अहिंसक साधनों द्वारा अपनी स्वतंत्रताकी रक्षा करता है और इसलिए जो अपने देशकी तथा अन्तमें सारी मानव-जातिकी स्वतंत्रताकी भी अहिंसक साधनोंसे रक्षा करता है।

ह., १५-४-'३९

दिसम्बर १३

जिन बातोंका संबंध अन्तरात्माके साथ होता है, उनमें बहुमतके कानूनके लिए कोई स्थान नहीं होता।

यं. इं., ४-८-'२०

दिसम्बर १४

हम बहुमतके आदेशके सिद्धान्तको खींचकर हास्यास्पद स्थिति तक न ले जायँ और बहुमत द्वारा पास किये गये प्रस्तावोंके गुलाम न बन जायँ। ऐसा करना पशुबलको अधिक प्रचंड रूपमें पुनः जीवित करना होगा। अगर अल्पमतके अधिकारोंका आदर करना हो, तो बहुमतको अल्पमतवालोंकी रायका और कार्यका आदर करना चाहिये। ...यह देखना बहुमतका फर्ज होगा कि अल्पमतवालोंकी बात अच्छी तरह सुनी जाय और अन्य किसी प्रकारसे उनका अपमान न हो।

यं. इं., ८-१२-'२१

दिसम्बर १५

बहुमतके शासनका संकुचित उपयोग है, अर्थात् मनुष्यको तफसीलकी बातोंमें बहुमतके सामने झुकना चाहिये। लेकिन बहुमतके चाहे जैसे निर्णयोंके अनुकूल बननेका अर्थ होगा गुलामी।

यं. इं., २-३-'२२

दिसम्बर १६

लोकतंत्रके सिद्धान्तों पर चलनेवाले राज्यमें लोग भेड़ोंकी तरह व्यवहार नहीं करते। लोकतंत्रमें व्यक्तिके मत और कार्यकी स्वतंत्रताकी सावधानीसे रक्षा की जाती है। इसलिए मेरी यह मान्यता है कि अल्पमतको बहुमतसे भिन्न आचरण करनेका पूरा अधिकार है।

यं. इं., २-३-'२२

दिसम्बर १७

किसी छोटे बच्चेको मौसमके असरसे बचानेके लिए आप रूईमें लपेटकर रखेंगे, तो उसका विकास रुक जायगा या वह मर जायगा। अगर आप उसे मोटा-ताजा और तगड़ा आदमी बनाना चाहते हैं, तो सारे मौसमोंमें उसके शरीरको खुला रहने दीजिये और उसे

मौसमोंका सामना करना सिखाइये। ठीक इसी प्रकार किसी भी सच्ची सरकारको चाहिये कि वह राष्ट्रकी प्रजाको अपने ही सामूहिक प्रयत्नों द्वारा अभावोंका, बुरे मौसमोंका और जीवनकी दूसरी कठिनाइयोंका सामना करना सिखाये; न कि उसे निष्क्रिय बनाकर किसी न किसी तरह जीवित रहनेमें उसकी मदद करे।

दि. डा., पृ. २४२

दिसम्बर १८

सत्ता हाथमें आनेसे मनुष्य अंधे और बहरे दोनों बन जाते हैं। अपनी आंखोंके सामने होनेवाली बातोंको वे देख नहीं सकते और अपने कानों पर आक्रमण करनेवाली बातोंको वे सुन नहीं सकते। इस प्रकार यह कहना कठिन है कि सत्ताके नशेमें चूर सरकार क्या नहीं करेगी। इसलिए ... देशभक्तोंको मृत्युके लिए, जेलके लिए और ऐसे अन्य संभव परिणामोंके लिए तैयार रहना चाहिये।

यं. इं., १३-१०-'२१

दिसम्बर १९

ईमानदारीसे की गई सेवाके फलस्वरूप जो सत्ता मिलती है, वह मनुष्यको ऊँचा उठाती है। जो सत्ता सेवाके नाम पर प्राप्त करनेकी कोशिश की जाती है और केवल बहुसंख्यक मतोंके बल पर ही प्राप्त की जा सकती है, वह निरा धोखा और भ्रमजाल है, जिससे बचना चाहिये।

यं. इं., ११-९-'२४

दिसम्बर २०

सत्ता दो तरहकी होती है। एक दंडका भय दिखाकर प्राप्त की जाती है और दूसरी प्रेमकी कलासे प्राप्त की जाती है। प्रेम पर आधार रखनेवाली सत्ता दंडके भयसे प्राप्त होनेवाली सत्ताके बनिस्बत हजार गुनी ज्यादा स्थायी होती है।

यं. इं., ८-१-'२५

दिसम्बर २१

ऊपरसे लादी हुई सत्ताको सदा पुलिस और सेनाकी सहायताकी गरज होती है, जब कि भीतरसे पैदा होनेवाली सत्ताके लिए पुलिस और सेनाका बहुत थोड़ा या जरा भी उपयोग नहीं होता।

ह., ४-९-'३७

दिसम्बर २२

जो लोग आम जनताका नेतृत्व करनेका दावा करते हैं, उन्हें आम जनता द्वारा बताये गये मार्ग पर चलनेसे दृढ़तापूर्वक इनकार कर देना चाहिये – अगर हम भीड़के कानूनसे बचना चाहते हैं और देशकी व्यवस्थित प्रगति साधनेकी अभिलाषा रखते हैं। मैं मानता हूँ कि नेताओंके लिए केवल अपनी राय ही दृढ़तासे जाहिर करना काफी नहीं है; परन्तु अत्यन्त महत्त्वके मामलोंमें नेताओंको आम लोगोंकी रायके खिलाफ जाकर भी काम करना चाहिये, यदि लोगोंकी राय उनकी विवेक-बुद्धिको न जँचे।

यं. इं., २३-२-'२२

दिसम्बर २३

प्रेम और अहिंसा अपने असरमें बेजोड़ और बेमिसाल हैं। परन्तु उनके कार्यमें किसी प्रकारकी भाग-दौड़, दिखावा, शोर-गुल या विज्ञापनबाजी नहीं होती। वे आत्म-विश्वासको पहलेसे ही मानकर चलते हैं, और आत्म-विश्वास आत्मशुद्धिको पहलेसे मानकर चलता है। निष्कलंक चरित्र तथा आत्मशुद्धिवाले मनुष्य आसानीसे लोगोंमें विश्वास पैदा करेंगे और अपने आसपासके वातावरणको अपने आप शुद्ध कर देंगे।

यं. इं., ६-९-'२८

दिसम्बर २४

सुधारकके मार्ग पर गुलाबके फूल नहीं बिछे रहते, बल्कि कांटे बिछे होते हैं; और उस मार्ग पर उसे सावधानीसे चलना पड़ता है। वह कांटोवाले मार्ग पर धीरे धीरे लंगड़ाते हुए ही चल सकता है, कभी कूदने या छलांग मारनेकी हिम्मत नहीं कर सकता।

यं. इं., २८-११-'२९

दिसम्बर २५

सुधारकका मार्गदर्शक करनेवाला नियम अन्तमें तो उसकी अन्तरात्माका आदेश ही है। ...अगर लोकमतने पहले ही किसी कानूनमें सुधार न करवा लिया हो अथवा उसे रद न करवा दिया हो, तो कुछ लोगोंका शुद्ध और पवित्र कष्ट-सहन उसे सुधरवा लेगा।

यं. इं., ७-२-'२९

दिसम्बर २६

अगर आप अपने प्रति सच्चे और इमानदार हैं, तो बाहर हर तरहकी गड़बड़ी दिखाई देने पर भी आप स्वस्थ और शान्त रहेंगे। इसके विपरीत, यदि आप अपने प्रति सच्चे और ईमानदार नहीं हैं, तो बाहर सब कुछ ठीक और व्यवस्थित दिखाई देने पर भी आपको शांति और स्वस्थता का अनुभव नहीं होगा।

ह., २०-५-'३९

दिसम्बर २७

मेरा देशप्रेम दूसरोंका बहिष्कार नहीं करता। वह सारे जगतको अपने भीतर समा लेनेवाला है। ऐसे देशप्रेमको मुझे स्वीकार नहीं करना चाहिये, जो दूसरे राष्ट्रोंकी मुसीबतोंसे लाभ उठाना चाहता है या दूसरे राष्ट्रोंका शोषण करना चाहता है। देशप्रेमकी मेरी कल्पनाका कोई अर्थ नहीं है, अगर वह हमेशा हरएक मामलेमें बिना किसी अपवादके सम्पूर्ण मानव-जातिके व्यापकसे व्यापक कल्याणके साथ सुसंगत न हो।

यं. इं., ४-४-'२९

दिसम्बर २८

मेरा इस बातमें विश्वास नहीं है ...कि कोई व्यक्ति तो आध्यात्मिक दृष्टिसे लाभ प्राप्त करे और उसके आसपासके लोगोंको वह लाभ न मिले। मैं अद्वैतमें विश्वास रखता हूँ; मेरा मानव-जातिकी मूल एकतामें और इसलिए सारे प्राणियोंकी मूल एकतामें विश्वास है। इसलिए मेरा यह विश्वास है कि अगर एक मनुष्यको आध्यात्मिक लाभ हो, तो उसके साथ सारे जगतको लाभ होता है; और अगर एक मनुष्य आध्यात्मिक दृष्टिसे नीचे गिरता है, तो उस हद तक सारा जगत नीचे गिरता है।

यं. इं., ४-१२-'२४

दिसम्बर २९

यह देखते हुए कि सब मनुष्य समान रूपसे नैतिक कानूनके अधीन हैं, हम यह कह सकते हैं कि मानव-जाति एक है। ईश्वरकी दृष्टिमें सब मनुष्य समान हैं। बेशक, मानव-समाजमें जातिके, दरजेके और ऐसे ही दूसरे भेद रहेंगे; परन्तु मनुष्यका दरजा जितना ज्यादा ऊँचा होगा, उतनी ही बड़ी उसकी जिम्मेदारी भी होगी।

ए. रि., पृ. ५७

दिसम्बर ३०

जिस प्रकार देशभक्तिका धर्म आज हमें सिखाता है कि व्यक्तिको परिवारके लिए मरना चाहिये, परिवारको गाँवके लिए मरना चाहिये, गाँवको जिलेके लिए, जिलेको प्रांतके लिए और प्रांतको देशके लिए मरना चाहिये, उसी प्रकार देशको इसलिए स्वतंत्र होना चाहिये कि जरूरत पड़ने पर वह जगतके कल्याणके लिए मर सके।

गां. इं. वि., पृ. १७०

दिसम्बर ३१

जो राष्ट्र अमर्यादित त्याग और बलिदान करनेकी क्षमता रखता है, वही अमर्यादित ऊँचाई तक उठनेकी क्षमता रखता है। बलिदान जितना अधिक शुद्ध होगा, प्रगति उतनी ही अधिक तेज होगी।

यं. इं., २५-८-'२०

* * * * *